श्री गुरुजी और जम्मू-कश्मीर

मैंने श्री गुरुजी को 'कर्ण महल' में प्रवेश करते देखा

जब महाराजा हरि सिंह जम्मू कश्मीर के महाराजाधिराज थे तो उन दिनों मैं उनका ए.डी.सी. था। यह अक्तूबर 1947 की बात है। दरबार कश्मीर में था। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ था और देश के रजवाड़े भारत के संघीय ढांचे में अपना विलय कर रहे थे। जम्मू कश्मीर के महाराजा के पास भी विलय का प्रस्ताव आया था। इधर पाकिस्तान की नजर जम्मू-कश्मीर राज्य को अपने अवैध कब्जे में लेने की थी। वह जम्मू-कश्मीर पर कबाइली आक्रमण की योजना बना रहा था और महाराजा को यह निर्णय लेने में कुछ विलम्ब हुआ कि उनके हित भारतीय संघीय ढांचे में ही हैं।

अक्तूबर 1947 की ही बात है। तारीख मुझे ठीक से स्मरण नहीं है। मैंने तत्कालीन महाराजाधिराज महाराजा हरि सिंह के 'कर्ण महल' में एक महापुरुष को निजी वाहन में प्रवेश करते हुए देखा। वह यहाँ महाराजा से मिलने आए हुए थे। बाद में हमें पता चला कि उनका नाम श्री माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर है और वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक हैं। उन्हें सभी श्री गुरुजी के नाम से पुकारते हैं। दूसरी बार भी मैंने श्री गुरुजी को जम्मू के एक कार्यक्रम में देखा था। मैं उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व से काफी प्रभावित रहा हूँ।

उस दिन कश्मीर में महाराजा हरि सिंह और श्री गुरुजी के मध्य में क्या बातचीत हुई इसकी जानकारी नहीं मिल पायी, लेकिन इतना अवश्य है कि दोनों के मध्य काफी समय तक विचार विमर्श हुआ था।

-कैप्टन दिवान सिंह

महाराजा हरि सिंह के ए.डी.सी.

श्री गुरुजी
और
जम्मू-कश्मीर

सम्पादन एवं संकलन

डा. महाराजकृष्ण भरत

उपेन्द्र कृष्ण भट्ट

प्रकाशक : श्री गुरुजी जन्मशताब्दी समारोह समिति, जम्मू–कश्मीर

वीर भवन, रघुनाथपुरा, जम्मू–180001

दूरभाष : 0191–2520214, 2520877

संगणक – बलवान सिंह

प्रथम संस्करण : दीपावली विक्रमी संवत् 2063, (अक्तूबर 2006)

मूल्य : पांच रुपये

प्रकाशक की ओर से ....

परम पूजनीय श्री गुरुजी का जम्मू कश्मीर के साथ गहरा लगाव रहा है। भारत के मुकुटमणि इस प्रदेश के स्वरूप एवं अस्तित्व तथा यहां के हिन्दू समाज की सुरक्षा को लेकर वे सतत जागरूक रहते थे। प्रारम्भ से ही इस प्रदेश के बारे में राष्ट्रीय संवेदना, संघ के स्वयंसेवकों के माध्यम से सम्पूर्ण भारत में सक्रिय रूप से प्रकट होती रही है। जब भारत विभाजन के बाद जम्मू कश्मीर के भारत में विलय के सम्बन्ध में व्यक्तिगत अहंकार आड़े आ रहे थे, तब संघ के स्वयंसेवकों विशेषकर श्री गुरुजी ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। श्री गुरुजी ने न केवल तत्कालीन महाराजा हरि सिंह से भेंट कर उन्हें विलय के लिए प्रेरित किया, अपितु देश की सरकार को भी महाराजा की अनुकूल मनःस्थिति से अवगत कराया। यह उनका जम्मू कश्मीर में तीसरा प्रवास था। प्रथम बार श्री गुरुजी 1941 में जम्मू तथा 1946 में श्रीनगर पधारे थे।

समय–समय पर श्री गुरुजी ने जम्मू कश्मीर प्रदेश में तथा देश के अन्य प्रांतों में इस राज्य तथा राष्ट्र से संबंधित जिन तात्कालिक विषयों पर अपनी बैठकों, बौद्धिक वर्गों तथा सार्वजनिक सभाओं में उद्‌बोधन दिए, पत्रकार वार्ताओं तथा साक्षात्कारों में जो विचार व्यक्त किए, ऐसे ही और विषय जो 'श्री गुरुजी समग्र' तथा 'श्री गुरुजी समग्र दर्शन' के खण्डों में भी यत्र–तत्र देखने को मिलते हैं उन को भी इस पुस्तिका में संकलित किया गया है। आलेख, भावांजलि, उद्‌बोधन, पत्रकारवार्ता, स्वसंसेवकों से पत्र व्यवहार तथा संस्मरण नाम से इस पुस्तिका में छह अध्याय हैं तथा अंत में परिशिष्ट भी जोड़ दिया गया है, जिसमें श्री गुरुजी की इस प्रदेश में प्रवास संबंधी जानकारी दी गई है।

डा॰ श्यामा प्रसाद मुखर्जी तथा पं॰ प्रेम नाथ डोगरा के प्रति भावांजलि प्रस्तुत करते हुए श्री गुरुजी ने जम्मू कश्मीर के संदर्भ में उनके महत्त्वपूर्ण योगदान का भी उल्लेख किया है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर श्री गुरुजी ने भारत–पाक सम्बंधों, युद्ध की विभीषिकाओं, पाकिस्तान की मनोवृत्ति, शरणार्थियों की त्रासदी के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र संघ, अमरीका एवं चीन की मंशा को भी हमारे समक्ष रखा है।

वर्तमान में यह प्रदेश अंतर्राष्ट्रीय षड्यंत्रों का केन्द्र बना हुआ है। इस प्रदेश के बारे में श्री गुरुजी का जो चिंतन था, देश की सम्प्रभुता, अक्षुण्णता को बनाए रखने के लिए जैसा वे चाहते थे, वैसा भाव देश के राजनीतिक नेतृत्व ने कभी आचरण में नहीं लाया और न ही वैसा व्यवहार किया, बल्कि उनकी अपेक्षा व सलाह के विपरीत ही व्यवहार करते रहे हैं। इसलिए आज पग–पग पर यह संदेह बना रहता है कि देश का सत्तासीन राजनीतिक नेतृत्व जम्मू कश्मीर के संदर्भ में गुपचुप ढंग से कोई समझौता तो नहीं कर रहा है या फिर कर लेगा?

पूजनीय श्री गुरुजी की भावनाओं को समझते हुए इस प्रदेश की रक्षा का दायित्व निभाना हमारे लिए प्रमुख कर्तव्य है। उनकी भावनाओं और उनके कर्तव्य को संजोने और आमजन तक पहुंचाने के लिए यह पुस्तिका सहायक सिद्ध होगी। श्री गुरुजी ने इस राज्य के विलय के बारे में कितनी महती भूमिका निभायी, इसकी पुष्टि राजभवन से कैसे हो, जब इस संदर्भ में महाराजा हरि सिंह के तत्कालीन ए.डी.सी. कैप्टन दिवान सिंह से मिलना हुआ तो उन्होंने हमारे प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार करते हुए इस ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि की। इस बारे में उनके संस्मरण को संकलित करते हुए हमें हर्ष हो रहा है। पुस्तिका में जिन श्रेष्ठ बंधुओं के संस्मरण संकलित किये गये हैं, उनके प्रति भी आभार। इन संस्मरणों से भी श्री गुरुजी के व्यक्तित्व के कई आयाम सामने आते हैं। संस्मरणों को एकत्र करने के लिए प्रारम्भिक प्रचारकों में श्री भगवत स्वरूप, वयोवृद्ध कार्यकर्ता डा॰ ओमप्रकाश मैंगी तथा श्री सतपाल जी का भी सक्रिय योगदान रहा। डा॰ किशोरी लाल भाटिया के मार्गदर्शन का उल्लेख करना भी समीचीन होगा। उनके प्रति आभार।

इस सारी सामग्री को संकलित और सम्पादित करने का श्रेय डा॰ महाराजकृष्ण भरत तथा श्री उपेन्द्र भट्ट को जाता है। उनके अथक परिश्रम से यह पुस्तिका हमारे सामने आई है। त्रिकुटा संवाद केन्द्र और संगणक बलवान सिंह का इस आयोजन में नामोल्लेख न हो तो बात अधूरी रहेगी। इन सभी का सहयोग प्रशंसनीय रहा। सभी के प्रति आभार। हम इस आयोजन में कितने सफल हुए हैं यह तो आप ही बता सकते हैं। आपके सुझावों और मार्गदर्शन की प्रतीक्षा रहेगी।

दिनांक 26 अक्तूबर 2006

प्रस्तावना

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक श्री गुरुजी (पू. माधवराव सदाशिवराव गोलवलकर) की जन्मशताब्दी वर्ष 2006–07 में प्रकाशित नानाविध साहित्य में यह पुस्तक अपना एक महत्व रखती है। श्री गुरुजी मनसा, वाचा, कर्मणा भारत व भारतीय समाज के साथ एकरूप व समरस थे। कष्ट देश पर आया अथवा समाज पर उनको उसकी पूर्व अनुभूति होती थी। जब देश की स्वतंत्रता व विभाजन की क्रूरता व हर्ष के बीच हम जूझ रहे थे, उस समय उन्होंने राष्ट्रभक्ति का जागरण कर हिन्दू रक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विस्थापितों के लिए पूर्वी भारत में वास्तुहारा सहायता समिति व पश्चिम में पंजाब रिलीफ कमेटी बना कर स्वयंसेवकों ने अविस्मरणीय सहायता व सेवा कार्य सम्पन्न किया। श्री गुरुजी की प्रेरणा से स्वयंसेवकों ने पलायन नहीं बलिदान व संघर्ष का इतिहास गढ़ा। जब भारतीय रियासतों के विलय के प्रश्न पर महाराजा कश्मीर दुविधा की स्थिति में थे तो श्री गुरुजी स्वयं सब प्रकार के खतरों के बीच श्रीनगर गये तथा महाराजा को प. नेहरू के व्यवहार का कड़वा घूंट पीकर भी भारत के साथ विलय के लिए तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

यह पुस्तक श्री गुरुजी व जम्मू–कश्मीर प्रदेश पर केन्द्रित है। मैं स्वयं 17 वर्षो (1983–2000) तक घोर आतंकवाद के समय में जम्मू–कश्मीर में रहा हूं इसलिए पू. श्री गुरुजी के मार्गदर्शन व सक्रिय सहयोग की उपलब्ध बातों का अनुभवी हूं। उन्होंने स्वयंसेवकों का व्यक्तिगत व सामूहिक रूप से जो विभिन्न अवसरों व समस्याओं पर प्रेरणादायी मार्गदर्शन किया, वह भी वर्णित है। समग्र दर्शन व अन्य अनेक पुस्तकों व स्मारिकाओं में यह लघु पुस्तिका हमारे लिए व्यक्तिगत जीवन में व राष्ट्रीय जीवन में मार्गदर्शन के लिए प्रस्तुत है। लेखक, सामग्री संग्रह में सहायता करने वाले तथा प्रकाशक बधाई के पात्र हैं।

–इन्द्रेश कुमार
सदस्य
अखिल भारतीय कार्यकारिणी मंडल

विषय-सूची

जम्मू-कश्मीर का विलय : संघ के प्रयास

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रारंभ से ही इस प्रक्रिया में संलग्न रहा, कि जम्मू–कश्मीर का विलय भारत के संघीय ढांचे में हो और यथाशीघ्र हो। भारत विभाजन के बाद जब इस राज्य के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह अपने रजवाड़े के विलीनीकरण के बारे में किम्कर्तव्यविमूढ़ की स्थिति में थे तो यह श्री गुरुजी ही थे जिन्होंने महाराजा से भेंट कर उन्हें भारत में विलीनीकरण के लिए प्रेरित किया। यह उनका दूसरा कश्मीर प्रवास था। इससे पूर्व श्री गुरुजी 1946 में कश्मीर पधारे थे और यहां उन्होंने श्रीनगर में एक हजार से भी अधिक गणवेषधारी स्वयंसेवकों को सम्बोधित किया था। जम्मू–कश्मीर राज्य संघ के प्रयासों से ही भारत का अविभाज्य अंग बन गया।

उस समय माउण्टबेटन की यह मंशा थी कि यदि जम्मू–कश्मीर राज्य का विलय भारतीय संघ में हो गया तब सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण गिलगित का क्षेत्र अमेरिकी गुट के प्रभाव से निकल जायेगा। इसके विपरीत पाकिस्तान में कश्मीर का विलय होने पर उन्हें यह सुविधा होती रहेगी और सोवियत संघ की सैनिक घेराबंदी की योजना साकार नहीं हो सकेगी। इधर कुशल कूटनीतिज्ञ माउण्टबेटन ने महाराजा को अपने प्रभावक्षेत्र में करने के लिए कई प्रयास किये, वह नहीं चाहते थे कि जम्मू–कश्मीर का विलय भारतीय संघ में हो। उन्होंने जम्मू–कश्मीर के तत्कालीन प्रधानमंत्री रामचन्द्र काक की अंग्रेज पत्नी को माध्यम बनाकर काक और महाराजा हरिसिंह को अपने प्रभाव क्षेत्र में लेने का प्रयास किया, जिसमें वह कुछ सफल भी हुए। उस समय शेख अब्दुल्ला ने भी ब्रिटिश साम्राज्य के इशारे पर महाराजा के विरुद्ध 'कश्मीर छोड़ो' का आंदोलन छेड़ रखा था।

संघ ने तत्कालीन परिस्थितियों का संज्ञान लेकर महाराजा हरिसिंह को यथास्थिति से अवगत कराने का प्रयास किया तथा उन्हें रियासत को भारतीय संघ में मिलाने के लिए प्रेरित किया। संघ ने सबसे पहले तो वहां के प्रधानमंत्री रामचन्द्र काक का खुलेआम पर्दाफाश किया। स्थान–स्थान पर सभाएं कीं, प्रदर्शन किये, महाराजा से प्रतिनिधि मंडल मिलवाए तथा काक द्वारा अपनाई जा रही रियासत विरोधी भूमिका का काला चिट्ठा सप्रमाण उनके सामने रखा। उसे पदच्युत करवाया और फिर महाराजा का मन विलय के पक्ष में करने हेतु बहुआयामी प्रयास किये। पहले तो जनजागरण प्रारम्भ किया गया, फिर विलय के पक्ष में व्यापक हस्ताक्षर अभियान जम्मू क्षेत्र में चलाया गया। जम्मू के संघचालक पं. प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में वह हस्ताक्षरयुक्त ज्ञापन महाराजा को सौंपा गया और जम्मू की जनता की ओर से महाराजा से आग्रह किया गया कि वे सब आशंकाओं से मुक्त होकर रियासत का विलय भारत में कर दें, इसी में उनका व रियासत का हित है।

रायबहादुर बद्रीदास पंजाब प्रांत के संघचालक थे। वे प्रख्यात अधिवक्ता थे और उनका महाराजा पर अलग प्रभाव था। वे महाराजा के महत्वपूर्ण मामलों

में उनकी ओर से अदालत में पैरवी करते थे। वे सितम्बर मास में श्रीनगर आकर महाराजा से मिले तथा उन्हें विलय हेतु राजी करने का भरपूर प्रयास किया। उत्तरप्रदेश के संघचालक बैरिस्टर नरेन्द्रजीत सिंह की ससुराल महाराजा के प्रमुख दिवान बद्रीनाथ के यहां थी। उनके भी इस नाते महाराजा से निकट के संबंध थे। वे भी महाराजा को प्रभावित करने का प्रयास करते रहते थे।

ये सभी प्रयास संघ के सरसंघचालक श्री गुरुजी की प्रेरणा से व उनकी जानकारी में ही चल रहे थे क्योंकि संघ तथा भारत समर्थक हर वर्ग की यही तीव्र इच्छा थी कि जम्मू–कश्मीर राज्य हर स्थिति में भारत के ही साथ रहना चाहिए। इसलिये संघ के समान सभी ऐसे तत्व अपने–अपने ढंग से प्रयत्नशील थे। बलराज मधोक के समान जिन वरिष्ठ कार्यकर्ताओं का निकट संबंध महाराजा से था, वे महाराजा के सतत सम्पर्क में रहकर उनके मन के असमंजस को दूर करने का प्रयास करते ही रहते थे। पाकिस्तानी खतरे व उसकी नीयत से उन्हें अवगत कराते ही रहते थे। यही नहीं पाकिस्तान द्वारा कश्मीर पर हमले की योजना तथा कश्मीर की सेना के मुस्लिम अफसरों व सैनिकों की पाकिस्तान से सांठगांठ तथा हमले के अवसर पर गद्दारी करने के षड्यंत्र से भी उन्हें समय पर अवगत कराया गया था।

श्री मधोक ने 8 अक्तूबर 1947 को रावलपिंडी व एबटाबाद से आये कुछ चुनिंदा स्वयंसेवकों को पाकिस्तान से आने वाले मुसलमानों के अड्डों पर निगरानी रखकर उनसे जानकारी प्राप्त करने हेतु तैनात किया था। दो–तीन दिन में ही स्वयंसेवकों ने पूरी मुस्तैदी के साथ पाकिस्तानी कबायली आक्रमण की पूर्व जानकारी प्राप्त कर ली और श्री मधोक ने तुरन्त यह सब जानकारी महाराजा तथा उनके डोगरा सेनाधिकारियों को दे दी। सेना के सूत्रों ने भी इसकी पुष्टि की थी। उस कालखण्ड में जम्मू–कश्मीर राज्य को भारतीय संघ में जोड़ने तथा कबायली आक्रमण का मुकाबला करने में संघ प्रेरणा से स्वयंसेवकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। चाहे वह श्रीनगर व पुंछ के हवाई अड्डे को भारतीय सैनिक विमान उतरने योग्य बनाने का काम था चाहे दंगाइयों से माँ–बहनों को सुरक्षित बचाने का कार्य, स्वयंसेवकों ने भारतीय सेना के साथ कदम से कदम मिलाकर राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग किया।

14 अगस्त को जब श्रीनगर शहर में पाकिस्तानी तत्वों ने कुछ महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों पर पाकिस्तानी झण्डे फहराये तो स्वयंसेवकों ने सक्रियता दिखाकर पाकिस्तानी झण्डे उतारकर भारत के तिरंगे ध्वज को फहरा दिया।

ऐसा भी नहीं था कि महाराजा अपने राज्य का विलय भारत में करना नहीं चाहते थे। परन्तु एक तो प्रधानमंत्री काक तथा भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउण्टबेटन तक ने 'भारत में विलय करने पर संकटों का पहाड़ उनके राज्य पर टूट पड़ेगा' उसका जो भयानक चित्र उनके सामने प्रस्तुत किया था उससे वे विचलित थे और दूसरे वे भारतीय नेताओं विशेषकर, पं. नेहरू के प्रति अत्यंत आशंकित थे। शेख अब्दुल्ला को वे पसंद नहीं करते थे और पं. नेहरू शेख को सत्ता सौंपने की शर्त पर ही विलय स्वीकारने को तैयार थे। जब पं. नेहरू शेख के समर्थन में कश्मीर जा रहे

थे तो महाराजा ने पं. नेहरू को कश्मीर में प्रवेश नहीं करने दिया था।

घटनाक्रम यह था कि शेख अब्दुल्ला के नेतृत्व वाली नेशनल कांफ्रैंस ने 10 मई 1946 को महाराजा के विरोध में 'भारत छोड़ो आंदोलन' की तर्ज पर 'कश्मीर छोड़ो' आंदोलन शुरू कर दिया था। 20 मई को शेख व उसके अनेक साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया था। इससे विचलित होकर पंडित नेहरू ने महाराजा को पत्र लिखकर शेख अब्दुल्ला को तुरन्त रिहा करने की मांग की थी। इतना कहकर ही वे संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि शेख के समर्थन में स्वयं कश्मीर जाने को तैयार हो गये। हालांकि कांग्रेस के वरिष्ठ नेताओं ने उन्हें वैसा न करने की सलाह दी थी, परन्तु पं॰ नेहरू ने उनकी सलाह को नकार दिया। महाराजा ने भी पं. नेहरू से कहा था कि शेख अब्दुल्ला का यह आंदोलन ब्रिटिश सरकार के इशारे पर है तथा वह भारत के हित के विरुद्ध है, अतः वे उसके समर्थन में कश्मीर न आयें, पर पं. नेहरू नहीं माने। उन पर तो शेख अब्दुल्ला की दोस्ती का 'भूत' सवार था। पं. नेहरू द्वारा अपनी जिद पर अड़े रहने के कारण महाराजा ने उनके कश्मीर प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया। जब पं. नेहरू इस प्रतिबंध को तोड़कर कश्मीर गये तो उन्हें वहां बंदी बना लिया गया। इस घटना से क्रोधित होकर अब नेहरू महाराजा को सबक सिखाना चाहते थे। इस प्रकार कश्मीर के भारत में विलय के मार्ग में अनेक व्यक्तिगत अहंकार आड़े आ रहे थे।

महाराजा ने संघ तथा भारत समर्थक अन्य वर्गों के सुझावों एवं तर्कों की बात मानकर अपनी ओर से विलय के प्रस्ताव भी भेजे थे। उन्होंने इस हेतु अपने दूत के रूप में हरनामसिंह पठानिया को दिल्ली भेजा था, परन्तु पं. नेहरू के प्रतिकूल रुख के कारण काम बन नहीं सका।

अंत में संघ की योजना के अनुसार श्री गुरुजी ने श्रीनगर जाकर महाराजा से भेंटकर उन्हें राजी करने का निर्णय किया। वे 17 अक्तूबर 1947 को विमान द्वारा श्रीनगर पहुंचे। वे वहां संघ की व्यवस्था के अंतर्गत बैरिस्टर नरेन्द्रजीत सिंह की ससुराल दीवानियत भवन में ही ठहरे। बैरिस्टर साहब भी श्री गुरुजी के साथ आये थे। इसके अतिरिक्त दिल्ली प्रांत प्रचारक वसंतराव ओक भी उनके साथ थे। पंजाब प्रांत प्रचारक माधवराव मुल्ये भी वहां उपस्थित थे। श्री गुरुजी की सुरक्षा का भार हरीश भनोट (प्रचारक) की ओर था। घटनाक्रम के बारे में श्री भनोट ने स्वयं बताया कि वे 26 सितम्बर को जालंधर में थे। वहीं उन्हें सूचना मिली कि श्री गुरुजी का प्रवास श्रीनगर होने वाला है, इस कारण अक्तूबर के प्रथम सप्ताह में वे वहां पहुंच गये। जम्मू-कश्मीर विभाग प्रचारक जगदीश अब्रोल को भी तार भेजकर वहां पहले ही बुला लिया गया था।

दूसरे दिन अर्थात् 18 अक्तूबर को श्री गुरुजी अपनी निजी कार से महाराजा से मिलने उनके निवास 'कर्ण महल' पहुंचे। महाराजा व महारानी दोनों श्री गुरुजी पर अपार श्रद्धा रखते थे। महाराजा संघ पर भी काफी भरोसा करते थे और उनका विश्वास था कि संकट की घड़ी में संघ के स्वयंसेवक राज्य की रक्षा के कार्य में मदद करेंगे, इसलिए भी महाराजा हरिसिंह व महारानी तारा दोनों

श्री गुरुजी के स्वागत के लिये द्वार पर ही उपस्थित थे। महाराजा ने श्री गुरुजी के चरण स्पर्श करने के लिये ज्यों ही अपने हाथ नीचे किये श्री गुरुजी ने उनके हाथों को पकड़ लिया। साढ़े दस बजे के लगभग चर्चा प्रारम्भ हुई। महाराजा से भेंट के समय संघ का अन्य कोई अधिकारी वहां उपस्थित नहीं था।

महाराजा से उनकी क्या चर्चा हुई इसका ठीक लेखा–जोखा उपलब्ध नहीं है, क्योंकि श्री गुरुजी ने उस चर्चा के बारे में विस्तार से किसी को कुछ नहीं बताया। चर्चा आशाजनक हुई और इसी विषय पर हुई है, यह इसी बात से सिद्ध होता है कि श्री गुरुजी को विदा करते समय महाराजा ने कहा कि मैं आपके सुझावों पर अवश्य विचार करूंगा। विदाई के समय उन्होंने श्री गुरुजी को दो बहुमूल्य कश्मीरी शाल भेंट किये। प्रस्थान समय श्री गुरुजी ने महाराजा को सलाह दी कि युवराज को तो आप जम्मू भेज ही दें और स्वयं श्रीनगर रहें जिससे जनता का मनोबल न टूटे। यहां स्वयंसेवक आपकी सुरक्षा का प्रबंध करेंगे।

यह संकेत इस बात से भी मिलता है कि दूसरे दिन 19 अक्तूबर को लौटते समय उन्होंने संघ के प्रमुख अधिकारियों को यह परामर्श अवश्य दिया कि वे महाराजा से सतत सम्पर्क बनाये रखें तथा उन्हें संघ के द्वारा सब प्रकार के सहयोग का आश्वासन देते रहें जिससे वे अकेलेपन का अनुभव न करें। उन्होंने कहा कि चर्चा सुखद ही रही जिससे मुझे आशा की किरण नजर आती है, यद्यपि अभी निश्चित कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

चर्चा के बाद शाम को उसी दिन लाल चौक के पास मगरमलबाग में स्थित डी. ए.वी. स्कूल परिसर पर पूर्व कार्यक्रम अनुसार प्रमुख स्वयंसेवकों का एकत्रीकरण हुआ, संख्या लगभग 500 थी। इस एकत्रीकरण में सर्वश्री बलराज मधोक, केदारनाथ साहनी, भगवत स्वरूप, अमरनाथ वैष्णवी तथा ओमकार नाथ काक (प्रचारक, अनंतनाग), अवतार कृष्ण काव (प्रचारक, बारामूला), मखनलाल ऐमा (प्रचारक, श्रीनगर), ब्रजनाथ मियां, रामरतन परिहार, देवकी नंदन नखासी (बाद में निजी सहायक डा. श्यामप्रसाद मुखर्जी) द्वारिका नाथ जलाली, कन्हैया लाल वथू, निरंजन नाथ दुरानी, सोमनाथ भान, मोहन लाल खर, बंसीलाल खर, एमके रैणा (मुख्य शिक्षक) तथा प्राणनाथ मियां आदि स्वयंसेवक भी उपस्थित थे। नगर के प्रमुख नागरिक भी वहां उपस्थित थे। उनके बीच श्री गुरुजी का बौद्धिक हुआ, परन्तु इसमें उन्होंने महाराजा से हुई भेंट के बारे में कुछ नहीं कहा और 19 अक्तूबर को ही वे वापस लौट गए।

भारत के तत्कालीन उप प्रधानमंत्री और गृह तथा रियासती मामलों के मंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल को पता था कि श्री गुरुजी का महाराजा पर अच्छा प्रभाव है अतः वे श्री गुरुजी व संघ पर श्रद्धा रखते थे। उन्होंने भी श्री गुरुजी के इस प्रवास में सहयोगी की भूमिका ही निभायी। श्री गुरुजी ने भी श्रीनगर से लौटकर महाराजा की अनुकूल मनः स्थिति से सरदार पटेल को अवगत कराया। सौभाग्य से तब तक श्री मेहरचंद महाजन जम्मू–कश्मीर के प्रधानमंत्री का पदभार सम्भाल चुके थे। वे भी कश्मीर के भारत मे विलय के प्रबल

समर्थक थे तथा उनकी भी श्री गुरुजी के प्रति श्रद्धा थी। पंजाब से स्वयंसेवकों ने समाज रक्षा के लिये जो किया था वे उससे सुपरिचित थे। उन्होंने भी सहयोग किया। महाराजा को वे बताते रहे कि श्री गुरुजी का परामर्श सही है।

श्री गुरुजी की इस भेंट व अन्य परिस्थितियों के कारण अंततः महाराजा ने विलय का निर्णय कर लिया और 26 अक्तूबर 1947 को राज्य के विलय प्रपत्र पर हस्ताक्षर हो गये। इस प्रकार असंदिग्ध रूप से यह कहा जा सकता है कि कश्मीर के भारत में विलय करने हेतु महाराजा को तैयार करने में संघ के स्वयंसेवकों विशेषकर श्री गुरुजी की अहम भूमिका रही है। यह भी कहा जा सकता है कि श्री गुरुजी की यह भेंट महाराजा को विलय का निर्णय करवाने में निर्णायक रही क्योंकि उस भेंट के बाद ही विलय की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गयी। पाकिस्तानी हमले ने उस निर्णय पर अंतिम मुहर लगवाई।

"ज्योति जला निजप्राण की" पुस्तक से साभार। कुछ और भी अंश जोड़े गये हैं। –सं

जम्मू-कश्मीर के विलय में योगदान

केन्द्रीय गृहमंत्री सरदार पटेल ने श्री मेहरचन्द्र महाजन, दिवान जम्मू–कश्मीर रियासत, से हिन्दुस्थान के साथ विलीनीकरण करने के लिए, महाराजा हरिसिंह को तैयार कराने को कहा था। श्री मेहरचन्द्र महाजन ने पू. श्री गुरुजी को संदेश पहुंचाया कि वे महाराजा से मिल कर उन्हें इस विलीनीकरण के लिये तैयार करें। श्री महाजन ने ही महाराजा और पू. श्री गुरुजी की यह भेंट तय की थी।

दिल्ली से श्रीनगर हवाई जहाज से पू. श्री गुरुजी दि. 17-10-1947 को पहुंचे। भेंट दिनांक 18 को प्रातः हुई। भेंट के समय 15-16 वर्षीय युवराज कर्णसिंह जांघ की हड्डी टूटने से प्लास्टर में बंधे वहीं लेटे हुए थे। श्री मेहरचन्द्र महाजन भेंट के समय उपस्थित थे।

महाराजा का कहना था "मेरी स्टेट पूरी तरह से पाकिस्तान पर अवलम्बित है। रास्ते सियालकोट, रावलपिण्डी की ओर से हैं। रेल सियालकोट की ओर से है। मेरे लिये हवाई अड्डा लाहौर का है। हिन्दुस्थान के साथ मेरा किस तरह संबंध बन सकता है।"

पू. श्री गुरुजी ने समझाया, "आप हिन्दू राजा हैं। पाकिस्तान से विलय करने से आप और आपकी हिन्दू प्रजा को भीषण संकटों से संघर्ष करना होगा। यह ठीक है कि अभी हिन्दुस्थान से रास्ते, रेल या हवाई मार्ग का कोई संबंध नहीं है। किन्तु यह सब शीघ्र ही ठीक हो जायेगा। आपका और जम्मू–कश्मीर रियासत का भला इसी में है कि आप हिन्दुस्थान से विलीनीकरण कर जायें।"

श्री मेहरचन्द्र महाजन ने महाराजा से कहा कि "श्री गुरुजी महाराज, ठीक कह रहे हैं। आपको हिन्दुस्थान के साथ मिलना चाहिये।"

अंत में महाराजा ने पू. श्री गुरुजी को 'तूस' की शाल भेंट की।

'जम्मू–कश्मीर के भारत–विलय' में पू. श्री गुरुजी का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा।

—माधवराव मुल्ये

(श्री गुरुजी समग्र दर्शन ,खण्ड 1, पृष्ठ 172)

जम्मू-कश्मीर में संघ कार्य और श्री गुरुजी

श्री गुरुजी प्रथम बार 1941 में जम्मू पधारे। तब तक जम्मू में संघ कार्य को प्रारंभ हुये दो साल हो गये थे। संघरूपी जिस वटवृक्ष के बीज 1925 में डा. हेडगेवार के भागीरथ प्रत्यनों से बोये गये थे, उसका स्वरूप दिनोंदिन निखर रहा था और देशभर में यह 'वृक्ष' समाज को अपनी ओर आकर्षित कर रहा था। इस बीच 1939 में जम्मू शहर तक भी इस वटवृक्ष की स्नेहिल छाया पहुंची। यह उन दिनों की बात है जब श्री बलराज मधोक लाहौर से अपने पिता के साथ जम्मू आये हुये थे तो उन्होंने यहां दिवान बद्रीनाथ मंदिर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की प्रथम संघ शाखा जम्मू में प्रारंभ की थी। बाद में 5 जून 1940 को केशवकपूर नाम के एक नवयुवक ने इस शाखा को गति प्रदान की। यह स्वयंसेवक स्यालकोट से जम्मू आया हुआ था।

संगठनात्मक रचना के अनुसार प्रारंभ में जम्मू–कश्मीर राज्य पंजाब प्रांत का ही विभाग था। इस प्रांत के तत्वावधान में प्राथमिक शिक्षा वर्गो (आईटीसी) का आयोजन होता रहता था। जब यह वर्ग स्यालकोट में आयोजित हुआ तो वहां जिन सात कार्यकर्त्ताओं की टोली सम्मिलित हुई थीं''। वही बाद में जम्मू में संघ कार्य का आधार बनी। यहीं से श्री जगदीश अब्रोल प्रचारक के नाते जम्मू आये। सरकारी नौकरी छोड़कर देशसेवा में समर्पित हो गये। जम्मू में वेद मंदिर के जिस कमरे में उनके रहने की व्यवस्था की गई थी वही बाद में संघ का प्रथम कार्यालय बन गया।

संघ के अनुशासन, देशभक्ति और बौद्धिकों को सुनकर आमजन प्रभावित हो गया। धीरे–धीरे वेद मंदिर के उस कमरे में चहलकदमी बढ़ गई। 1940 में पहला विजयदशमी उत्सव सभी शाखाओं को सम्मिलित कर मनाया गया। श्री श्यामलाल शर्मा प्रथम नगर कार्यवाह मनोनीत हुये। श्री दुर्गादास वर्मा दूसरे प्रमुख कार्यकर्ता थे। 1941-1942 तक जम्मू तथा आसपास के क्षेत्रों -- भद्रवाह, मीरपुर आदि में संघकार्य का विस्तार हो चुका था। यह वह समय था जब श्री गुरुजी का जम्मू आगमन हुआ और यहां उन्होंने स्वयंसेवकों एवं नागरिकों के भव्य कार्यक्रम में भाग लिया तथा कार्यक्रम के दौरान पंडित प्रेमनाथ डोगरा को जम्मू का संघचालक घोषित किया। पंडित डोगरा के अथक प्रयासों से संघ के कार्य विस्तार में बढ़ोत्तरी हुई तथा जम्मू में संघ को भी शक्ति प्राप्त हुई।

जम्मू संभाग में नये–नये प्रचारक निकलने लगे। श्री देवेन्द्र शास्त्री को रियासी तथा श्री चमनस्वरूप को कठुआ तथा श्री जगदीश अब्रोल को सरगोधा भेजा गया। जम्मू में श्री बलराज मधोक की नियुक्ति विभाग प्रचारक के रूप में हुई लेकिन मधोक जी की कश्मीर में विद्यालय में नियुक्ति के कारण यह दायित्व सवा साल बाद पुनः श्री अब्रोल को सौंपा गया। यहां उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। श्री अब्रोल के साथ–साथ श्री केदारनाथ साहनी, श्री श्यामलाल तथा श्री भगवत स्वरूप यहां के आरंभिक प्रचारकों में रहे। 1943 तक आते–आते जम्मू में शाखा कार्य ने विस्तार पाया। अब स्वयंसेवकों ने सामाजिक उत्सवों में भी योगदान देना शुरू किया। महाशिवरात्रि तथा जन्माष्टमी

पर स्वयंसेवकों ने इन पर्वों की सुरक्षा व्यवस्था का कार्य निष्ठापूर्वक तथा कर्तव्यपरायणता के साथ निभाया।

जम्मू–कश्मीर में संघ के प्रति समर्पण और विश्वास दिनोंदिन बढ़ रहा था। युवकों की टोलियां समाज में कार्य करने को उत्सुक और तत्पर रहती थीं। गांव–गांव तक शाखा के विस्तार करने के प्रयास किये गये। 1944 तक जम्मू संभाग के संघ–शाखा कार्य – राजौरी, पुंछ, डोडा, मीरपुर, कोटली, मुजफ्फराबाद, उधमपुर तथा कश्मीर जैसे क्षेत्र तक भी पहुंच गया था। श्रीनगर में 1944 में संघ की प्रथम शाखा प्रारंभ हुई। यहां प्राध्यापक श्री बलराज मधोक के प्रयास से संघ कार्य का श्रीगणेश हुआ। श्रीनगर में हजूरीबाग के पास यहां उनका निवास था वहीं नीचे की मंजिल में संघ कार्यालय था। शुरू में यहां पंजाब तथा जम्मूवासी स्वयंसेवकों की चहलकदमी रहती थी। धीरे–धीरे कश्मीर घाटी के हिन्दू युवक भी शाखा कार्य में जुट गये। इस प्रकार से संघ कार्य का विस्तार घाटी में भी होने लगा।

पांच साल बाद 1946 में श्री गुरुजी दूसरी बार जम्मू–कश्मीर आये। इस बार वे जम्मू, श्रीनगर के अतिरिक्त लाहौर भी गये। लाहौर के कृष्णानगर में उनके करकमलों द्वारा नये संघ कार्यालय का उद्घाटन भी हुआ। 10 नवम्बर 1946 को जम्मू में उन्होंने शरदपूर्णिमा के अवसर पर आयोजित समारोह में दो हजार स्वयंसेवकों को सम्बोधित किया। यह समारोह प्रतिकूल परिस्थितियों में बड़ी भव्यता के साथ बक्शीनगर में सम्पन्न हुआ। तब शहर में सांप्रदायिक तनाव के चलते धारा 144 लागू हुई थी, पर स्वयंसेवकों ने रतजगा रहकर कार्यक्रम की सारी व्यवस्थाएं पूरी कीं।

सन् 1946 में ही श्री गुरुजी ने श्रीनगर के डीएवी विद्यालय में एक हजार से अधिक गणवेशधारी स्वयंसेवकों को एक दिशा प्रदान की। यह कश्मीर घाटी में अपने में ऐसा पहला भव्य आयोजन था जहां स्वयंसेवक और आमजन उपस्थित थे। इसी उद्बोधन से प्रभावित होकर सर्वश्री ओमकारनाथ काक, मखनलाल ऐमा तथा अवतार कृष्ण काव जैसे स्वयंसेवक प्रचारक बनकर निकले। श्री काक अनंतनाग के, श्री ऐमा श्रीनगर के तथा श्री काव बारामुला के प्रचारक नियुक्त हुये। धीरे–धीरे कश्मीर घाटी में संघ कार्य इतना फैला कि वह वहां एक शक्ति बन गया।

श्री गुरुजी 17 अक्तूबर 1947 को तीसरी बार जम्मू–कश्मीर पधारे और इस बार उनका प्रवास केवल कश्मीर तक सीमित था। वे वहां महाराजा से मिलने आये हुये थे। 18 अक्तूबर को उनका महाराजा से भेंट का विवरण इस पुस्तिका के प्रथम आलेख में दिया जा चुका है।

प्रजा परिषद्

26 अक्तूबर 1947 को महाराजा हरिसिंह ने अपने राज्य का पूर्ण विलय भारत के साथ किया। पर उस समय देश के प्रधानमंत्री ने महाराजा की अन्य सिफारिशों को न स्वीकारते हुये शेख अब्दुल्ला को रियासत की बागडोर ही नहीं सौंपी बल्कि उन्हें महाराजा से अधिक प्राथमिकता भी दे दी। यह उस समय की सबसे बड़ी राजनीतिक भूल थी। इसी निर्णय का खामियाजा बाद में जम्मू लद्दाख तथा कश्मीर

की राष्ट्रभक्त जनता को भुगतना पड़ा। जम्मू–कश्मीर की राजनीतिक परिस्थितियों का आकलन करने के लिए जम्मू में 7 नवम्बर 1947 को पंडित प्रेम नाथ डोगरा की कोठी में दो दिवसीय चिंतन बैठक हुई, जिसमें जम्मू की जनता की राजनैतिक जागृति के लिए प्रजा परिषद् के नाम से एक संगठन का गठन किया गया। इस बैठक में प्रांत प्रचारक श्री माधवराव मुल्ये (जम्मू–कश्मीर, हिमाचल, पंजाब, हरियाणा तथा दिल्ली) विभाग संघचालक पंडित प्रेम नाथ डोगरा, विभाग प्रचारक श्री जगदीश अब्रोल, श्री बलराज मधोक तथा उनके सहयोगी श्री दुर्गादास वर्मा, श्री श्याम लाल शर्मा, श्री केदारनाथ साहनी, श्री भगवत स्वरूप, डा. ओमप्रकाश मैंगी, श्री सहदेव सिंह तथा हंसराज शर्मा एवं अन्य प्रमुख कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

प्रजा परिषद् के गठन के बाद इसने सत्तासीन नेशनल कांफ्रैंस की भेदभावपूर्ण नीतियों को उजागर किया तथा देश के सामने जम्मू–कश्मीर राज्य के पूर्ण विलय की मांग उठाई। 1952 के शेख – नेहरू समझौते के अंतर्गत शेख को अलग विधान, प्रधान और निशान की अनुमति दी गई थी और जम्मू–कश्मीर की देशभक्त जनता क्षुब्ध थी। शेख की नीतियों के विरोध में 22 जनवरी 1952 को प्रजा परिषद् के कार्यकर्ताओं तथा विद्यार्थियों ने आंदोलन का बिगुल बजाया। श्रीनगर में एक कार्यक्रम के दौरान तिरंगा झण्डा के बजाय नेशनल कांफ्रेंस के झण्डे के लहराने के विरोध में छात्र संगठन एसएनए (राष्ट्रीय छात्र संघ) ने विरोध प्रदर्शन किया, तथा 35 दिनों तक क्रमिक भूख हड़ताल की। इस आंदोलन को संघ के स्वयंसेवकों का सक्रिय योगदान मिला।

पंडित प्रेम नाथ डोगरा जो जम्मू में विभाग संघचालक भी थे ने प्रजा परिषद् के आंदोलन की प्रथम कड़ी में 21 नवम्बर 1952 को पहली गिरफ्तारियां दीं। गिरफ्तारियां तहसीलों तथा जिला मुख्यालयों पर भी दी गई। प्रजा परिषद् आंदोलन के प्रमुख नारे थे –

1. एक देश में दो विधान, दो प्रधान, दो निशान नहीं चलेंगे
2. धारा 370 तोड़ दो, भारत का विधान लागू करो।
3. जम्मू–कश्मीर का पूर्ण विलय भारत में हो।

आठ महीने तक चले इस आंदोलन में कई कार्यकर्ताओं को जेलों में काफी यातनाएं दी गई। 15 से अधिक कार्यकर्ता इस आंदोलन में शहीद हो गये। इसी आंदोलन को जनसंघ के संस्थापक अध्यक्ष डा. श्यमाप्रसाद मुखर्जी ने उस समय गति प्रदान की जब उन्होंने बिना परमिट लिये जम्मू–कश्मीर की सीमा में प्रवेश किया। उन्हें यहां गिरफ्तार किया गया और जेल में उनकी रहस्यमय परिस्थितियों में मृत्यु हो गई। आज भी उनका बलिदान रहस्य ही बना हुआ है। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप परमिट सिस्टम समाप्त हो गया। तिरंगे को भी राज्य में सम्मान मिलने लगा। कालांतर में वजीर–ए–आजम तथा सदर–ए–रियासत के पदनाम मुख्यमंत्री और राज्यपाल में परिवर्तित हुये, पर दो विधान और दो निशान आज भी विद्यमान हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अखिल भारतीय कार्यकारी मंडल व प्रतिनिधि सभा

में 1953 से 1973 के मध्य समय–समय पर प्रस्ताव पारित किये। इन प्रस्तावों में प्रजा परिषद् की इस मांग का समर्थन किया गया कि जम्मू कश्मीर का भारत में पूर्ण विलय होना चाहिए। अस्थाई कही जाने वाली धारा 370 को भी केन्द्र सरकार से हटाये जाने की मांग की गई, क्योंकि यह धारा प्रदेश के भारत में पूर्ण विलय को नकारती है।

काफी अंतराल के बाद श्री गुरुजी चौथी बार 18 मार्च 1960 में जम्मू पधारे और यहां परेड़ ग्राउंड में सार्वजनिक कार्यक्रम को सम्बोधित किया। व्यासपीठ पर पं. प्रेमनाथ डोगरा और लाला हंसराज गुप्ता भी विराजमान थे। पांचवी बार 1965 में उनका जम्मू आना हुआ और यहां 12 अक्तूबर को उन्होंने एक जनसभा को भी सम्बोधित किया। संभवतः अंतिम बार वे 24 अक्तूबर 1971 को जम्मू आये थे।

यहां पर हम केवल श्री गुरुजी के आगमन की तिथियों का ही आंकलन कर सके हैं। जम्मू–कश्मीर में उनके प्रवास के दौरान कई बैठकों, बौद्धिक वर्गों का भी आयोजन होता रहा है। प्रायः इन बैठकों, वर्गों तथा सार्वजनिक कार्यक्रमों के बाद श्री गुरुजी स्वयंसेवकों से अनौपचारिक रूप से बातचीत भी करते थे तथा उनके निजी जीवन के बारे में भी पूछते रहते थे। इस पुस्तिका के अंत में कुछ स्वयंसेवकों के संस्मरण भी दिये गये हैं जिनसे श्री गुरुजी के व्यक्तित्त्व के बारे में हमें और जानने का अवसर मिलेगा।

❑❑❑

भावांजलि

विशुद्ध राष्ट्रवादी डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी

(5 सितम्बर, 1953 को नागपुर से श्री गुरुजी द्वारा भेजा गया शोक संदेश)

कश्मीर का भारत में पूर्ण विलीनीकरण हो, कश्मीर भारत का अविभाज्य घटक रहे, इसके लिए चल रहे संघर्ष में डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी बलिदान हुए हैं। अपने शास्त्र कहते हैं कि शत्रु से जूझते समय जिन्हें वीरोचित मृत्यु आती है, उनको परमेश्वर का सर्वोच्च कृपाप्रसाद 'स्वर्ग' प्राप्त होता है। मेरे परमस्नेही व वंदनीय श्यामाबाबू को यह स्थान प्राप्त हुआ है। इसमें कोई संशय नहीं कि वे उस स्थान से यह आशीर्वचन देंगे कि उनके अनुयायियों को इस संघर्ष में यश प्राप्त हो।

गत बारह वर्षों से मेरे निकटस्थ रहे स्नेही श्री श्यामाबाबू का श्रीनगर में निधन हुआ–यह सुनकर आश्चर्याघात का अनुभव हुआ। उनका अंत्यदर्शन भी मैं नहीं कर सका। इस घटना से मेरे हृदय में जो घाव हुआ है, वह कभी भी भर नहीं सकता। उनका निधन मेरी वैयक्तिक क्षति तो है ही, देश का भी बड़ा भारी नुकसान हुआ है। चोटी के विद्वान, कुशल संगठक, प्रभावी वक्ता, बेजोड़ सांसद, पवित्र मातृभूमि को जीवन समर्पण किया हुआ एक लोकसेवक, विशुद्ध राष्ट्रवाद एवं नागरिक अधिकारों के लिए लड़ने वाला निर्भीक योद्धा और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वर्तमान काल में अभाव में दिखने वाला निष्कलंक चरित्र एक आदर्श सुसंस्कृत पुरुष अपने बीच से चला गया। उनका जीवन गणतंत्र राज्य व्यवस्था में विशेषत्व से अनुकरणीय है। दुर्दैव से आज की संकटमय परिस्थिति में यह विलक्षण आघात झेलना पड़ रहा है। इस क्षति की पूर्ति होने में बहुत समय लगेगा।

श्रीनगर में शेख अब्दुल्ला सरकार के कारागार में उनकी मृत्यु शासन पर कलंकभूत है। भारत के शासन पर भी उसका उत्तरदायित्व है। 'भारत के प्रधानमंत्री की सलाह के बिना मैं कोई भी कृति नहीं करता' –यह स्वयं शेख अब्दुल्ला ने कहा है। 'ईश्वर को जिसका कार्य पसंद आता है उसको वह इस संसार से जल्दी ले जाता है' –इस बात का स्मरण डा. मुखर्जी का 52वें वर्ष में हुआ निधन देख कर आता है। डा. मुखर्जी की आत्मा को शांति प्राप्त हो, ऐसा ही आचरण उनके अनुयायियों को करना चाहिए, इस अनुरोध के साथ मैं डा. मुखर्जी की स्मृति को वंदन करता हूँ।

उनकी वृद्धमाता जी को यह आघात सहने का धैर्य दे, यही परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ। डा. मुखर्जी की स्थानबद्धता, उनका कारावास में हुआ निधन, ये बातें विस्मृत होना कठिन हैं। अन्य कुछ न भी हो तब भी आघात दुर्लक्ष की जिम्मेदारी 'लोगों के' कहे जाने वाले शासन के नेताओं पर निश्चित रूप से है।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 1, पृष्ठ 114-115)

मेरा एक आधार चल बसा

26 जून 1956 को साप्ताहिक पांचजन्य में श्री गुरुजी का डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के संबंध में संस्मरणात्मक लेख छपा जिसके मुख्यांश उदधृत किये जा रहे हैं :–

.........आज से लगभग 16 वर्ष (1940) पूर्व नागपुर में सौभाग्य से मेरी भेंट डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी से हुई थी। उन दिनों नागपुर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का शिक्षा वर्ग चल रहा था और मैं उसका सर्वाधिकारी था। ..... मई 1940 की इस भेंट के पश्चात उनसे कई बार भेंट हुई और जनजीवन से संबंधित विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर हमारी वार्ता हुई। .... उनके ही कारण कश्मीर सम्पूर्ण नहीं तो भी उसका वह भाग जो अपनी ओर है अपनी मातृभूमि में ही रह सका और जनसंघ को अक्षय कीर्ति प्राप्त हुई। .... उन्होंने एक निकटवर्ती मित्र के नाते मुझसे परामर्श किये बिना, सिर्फ एक बार अपने स्वयं के बारे में महत्वपूर्ण निर्णय लिया। दुर्भाग्य से वह उनके लिये दुर्भाग्यपूर्ण सिद्ध हुआ।

न जाने क्यों उस समय मुझे आशंका हुई कि डा. मुखर्जी वहां (जम्मू–कश्मीर) न जायें। यदि वे जाएंगे तो वापस नहीं आयेंगे। वे वहां न जायें ऐसा संदेश भिजवाने का प्रत्यन भी मैंने किया, परन्तु विधि का विधान कुछ और था। परिणाम यह हुआ कि मेरा एक आधार चल बसा और डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के रूप में जो भविष्य की महान आकांक्षाएं साकार हो उठी थीं, वह चकनाचूर हो गयीं।

(श्री गुरुजी समग्र खण्ड 1, पृष्ठ 119–120)

उद्‌बोधन

बैठकें, बौद्धिक वर्ग तथा तात्कालिक विषय

■ हमारी संस्कृति पौरूषसंपन्न जीवन पर आधारित

—10 नवम्बर, 1946 जम्मू

1) हमारी संस्कृति पौरूषसंपन्न समाज जीवन पर आधारित है। हिन्दू संस्कृति की सभी विशेषताओं को प्रस्तुत करनेवाली भगवद्‌गीता भगवान ने जिस अर्जुन को सुनाकर उसको अपना कर्तव्य करने की प्रेरण दी, वह अर्जुन कायर नहीं था। पौरूष, पराक्रम, साहस की साक्षात मूर्ति था। परन्तु अपने कौन, पराये कौन, प्राप्त परिस्थिति में अपना कर्तव्य क्या है, इस बारे में उसके मन में भ्रम उत्पन्न हुआ था। भगवद्‌गीता सुनाकर भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन का भ्रमनिरास किया था।

2) अपने श्रेष्ठ, संपन्न समाज जीवन में गिरावट क्यों आई, ऐसा पूछने पर श्री गुरुजी ने उत्तर दिया कि, "अपना जीवन सुख समृद्धि से ओतप्रोत था। क्रमशः सुखासीनता बढ़ गई। अपने सांस्कृतिक गुरुत्व के अभिमान में समाज मस्त था। इससे पराक्रम नष्ट हुआ। आक्रमक को पहचानना भी भूल गये। मोहम्मद गजनबी को (राजपूताना) के राजस्थान रेगिस्तान में हमारे लोगों ने ही खाने पीने की सामग्री दे सोमनाथ मंदिर तक पहुंचाया।

अनुकरण की आवश्यकता नहीं

3) संघ का विचार और कार्यपद्धति श्री गुरुजी सुस्पष्ट कर रहे थे। एक सज्जन ने पूछा कि, " आज संसार में Socialism, Nazism, Fascism आदि विचार धारायें हैं और Democracy, Autocracy इत्यादि कार्य–पद्धतियां हैं। संघ का कौन सा -Ism, है और कौन सी Cracy है? श्री गुरुजी ने कहा कि अपने समाज जीवन का उत्थान यदि हमें करना है, तो उसी जीवन के मूलभूत सिद्धांत और उनके अनुरूप कार्यपद्धति हमें स्वतंत्र विचार कर विकसित करना आवश्यक है। संघ–निर्माता पू. डॉक्टरजी ने ऐसा ही संघ का विचार और कार्यपद्धति का विकास किया हुआ है। किसी का अनुसरण करने की हमें आवश्यकता नहीं है।

अंग्रेजियत के संस्कार

4) अपने लड़के को पढ़ाने और देखभाल करने के लिये एक सज्जन ने घर में अंग्रेज स्त्री रखी थी। लड़का अच्छी अंग्रेजी बोल सके, ऐसा वह चाहते थे। उसका दृष्टांत देखकर श्री गुरुजी ने कहा कि अंग्रेजी में बोलने की और क्रमशः अंग्रेजी में सोचने की आदत लगने पर लड़का कभी राष्ट्रभक्त नहीं बन सकता। हृदय से वह अंग्रेजों का गुलाम ही बना रहेगा।

कांग्रेस की फ्लैग कमेटी द्वारा केसरिया ध्वज की संस्तुति

5) कांग्रेस की ओर से देश का ध्वज निश्चित करने हेतु बनी फ्लैग कमेटी

ने केसरिया ध्वज का सुझाव देने पर भी तिरंगा झण्डा कैसे बना, ऐसा पूछने पर श्री गुरुजी ने कहा, 'इस विषय में कांग्रेस के ज्येष्ठ कार्यकर्ताओं का अवश्य ही विचार विमर्श हुआ होगा। परन्तु जिनके कारण देश का ध्वज तिरंगा घोषित हुआ, उनका या तो व्यक्तिगत अहंकार है या अपनी संस्कृति का अज्ञान है।'

(स्व. माधवराव मुल्ये की दैनिकी पूर्वजों के श्रेष्ठ जीवन की स्मृति से उद्धृत, पृष्ठ 236-237)

■ आप रिफ्युजी नहीं

भारत विभाजन के दौरान श्री गुरुजी अमृतसर में थे। श्री वसंतराव ओक और श्री माधवराव मुल्ये के साथ प्रख्यात नेता मेहरचंद महाजन और जस्टिस रामलाल श्री गुरुजी से भेंट करने आए थे। इस भेंट के मुख्यांश इस प्रकार हैं :-

श्री महाजन –'हम तो रिफ्युजी हैं।'

श्री गुरुजी (तुरंत)–'नहीं नहीं, आप रिफ्युजी नहीं हैं। यह राष्ट्र प्रत्येक व्यक्ति का है। आप सब इसके समान अधिकारी हैं। कोई अपने ही देश में रिफ्युजी कैसे हो सकता है। आसेतु–हिमाचल सारा राष्ट्र एक है।'

कुछ क्षण रुककर फिर बोले – 'हिन्दू बंधु अपने पावन धर्म की रक्षा के लिए दर–दर की ठोकरें खाकर भी इधर आ रहे हैं।उनके बलिदानों को कभी भुलाया नहीं जा सकता। वे इस भीषण परीक्षा में सफल हुए हैं।' (श्री गुरुजी का उत्तर सुनकर जस्टिस रामलाल की आँखें भर आई)।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 9, पृष्ठ 331)

■ हिमालय से कन्याकुमारी तक भारत एक

(फरवरी 1957 में दिया गया वक्तव्य)

कश्मीर के प्रश्न पर भारत सरकार को दृढ़ता से काम लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद् ने कश्मीर में जनमत–संबंधी जो प्रस्ताव पारित किया है, वह असामयिक है। कश्मीर का भारत में विलय तो बहुत पहले ही हो गया है। वास्तव में तो अब इस प्रश्न के उठाने की आवश्यकता ही नहीं है। यह मांग निष्पक्ष एवं न्याययुक्त है कि सुरक्षा परिषद् सदैव के लिए यह निर्णय दे कि कश्मीर की समस्या का अंतिम रूप से समाधान हो गया है और भारत के साथ कश्मीर का विलय अंतिम एवं अपरिवर्तनीय है।

यदि भारत सरकार ने इस प्रकार का निर्णय किया तो सारा देश उसके साथ होगा। इस प्रश्न पर किसी का मतभेद नहीं है। हमें ये जानकार गर्व अनुभव हो रहा है कि अंततोगत्वा हमारी सरकार ने अपनी कमजोर नीति का परित्याग कर सार्वभौमिक राष्ट्र के समान दृढ़ता की नीति अंगीकार की है। काश! यह दृढ़ता हमारी सरकार द्वारा उसी समय अपना ली गई होती, जब सन् 1948 में हमारी सेनाएं

आक्रांताओं को सफलतापूर्वक कश्मीर की भूमि से खदेड़ रही थीं। यह बात पहले ही अनुभव कर ली गई होती कि राष्ट्र संघ में न्याय की आशा लेकर जाना व्यर्थ है। सरकार के कर्णधारों को भी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के मोह से पहले ही छुटकारा मिल गया होता और उन्होंने 'विश्वशांति के प्रणेता' बनने के स्थान पर राष्ट्रीय चरित्र राष्ट्रीय प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय सुदृढ़ता निर्माण करने का प्रयास किया होता। कुछ भी हो, अपनी गलती सुधारने में सरकार ने समझ से काम किया है। मुझे आशा है कि सुरक्षा परिषद् के रुख से भारत सरकार की आंखे खुल जाएंगी और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को बनाने के लिए वह एक निश्चित तथा सुरक्षित नीति अपनाएगी।

इलाहाबाद में हुए प्रधानमंत्री नेहरू के भाषण से कुछ गलतफहमी पैदा हो गई है। उन्होंने इलाहाबाद में कहा था कि कश्मीर का प्रश्न कश्मीरियों का अपना है, उसमें भारतीयों को दखल देने का कोई अधिकार नहीं है। यह भाषण मंत्रीमंडल के निर्णय की भावना के विपरीत है और इसके कारण यह संदेह उत्पन्न हो सकता है कि कश्मीर और भारत दोनों अलग हैं। इस गलती के कारण जनता का उत्साह भंग होगा तथा भारतविरोधी शक्तियों को इस तर्क के आधार पर बल प्राप्त होगा। हमारे प्रधानमंत्री को चाहिए कि वे ऐसा वक्तव्य दें कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत एक और अविभाज्य है तथा ऐसी भ्रांत बातें करना छोड़ दें, जिसके कारण कश्मीर के प्रश्न को क्षति पहुंचे तथा राष्ट्रीय एकता को एक प्रकार का धक्का लगे।

–श्रीगुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 250

■ जनसभा

आंतरिक शक्ति की आवश्यकता

(24 अक्तूबर 1971 जम्मू)

पूर्व और पश्चिम दोनों सीमाओं पर शत्रु की हलचलें बढ़ रही हैं। सीमाएं दिन–पर–दिन सुलगती जा रही हैं। शत्रु कब बारूद में आग लगा देगा, कहना कठिन है। आक्रमण कभी भी हो सकता है। इन सब संभावनाओं पर, लोग बड़ी सतर्कता से विचार कर रहे हैं। साथ ही यह भी सोचते हैं, कि चारों ओर से विपत्तियां भी आ रही हैं। इस स्थिति में आतंक कदापि निर्माण नहीं होना चाहिए । धैर्य बना रहना चाहिए।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि देश के बड़े कहलाने वाले लोगों के मन में भय की अवस्था दिखाई देती है। उन्हें लगता है, दुनिया में अपना कोई भी साथी नहीं। इसी मानसिक स्थिति में रूस के साथ सन्धि हुई है। वैसे विश्व में देशों के बीच सन्धियां होना स्वाभाविक बात है। इस लिए रूस ही क्यों, अन्य देशों के साथ भी सन्धियां हो सकती हैं। कल चीन भी संधि करने के लिए इच्छुक दिखाई दे, तो उसके साथ भी संधि करनी चाहिए। परन्तु मुझे जिस बात का दुख हुआ वह यह, कि संधि होते ही सब नेतागण हर्ष–विभोर होकर नाचने लग गए। चारों ओर घोषणाएं

की जा रही हैं, कि हम एकाकी नहीं रहे। हमें मित्र मिल गया है। सोचना चाहिए कि जिस प्रकार हमने रूस के साथ संधि की है, उसी प्रकार रूस ने भी तो हमारे साथ संधि की है। तब वहां के लोग इस प्रकार खुशी में पागल होते हुये क्यों नहीं नाच रहे हैं? केवल हमारे ही यहां इस प्रकार, मानों सन्धि होना दुनिया में कोई अघटित बात हो गई हो ऐसा सोच कर, हर्ष में लोग पागल क्यों हो रहे हैं? उसका कारण यह है, कि देश की आंतरिक शक्ति की अनुभूति कहीं होती हुई दिखाई नहीं देती। इसलिए नेताओं को लगता है, कि एक मित्र मिल गया, यही भगवान की बड़ी कृपा है। किंतु यह शक्तिशाली की प्रतिक्रिया नहीं। वरन् एक शक्तिहीन का प्रलाप ही कहा जा सकता है।

(श्री गुरुजी समग्र दर्शन, खण्ड–6, पृष्ठ 204)

भारत-पाक युद्ध : सन् 1965

(8 सितंबर 1965, दिल्ली से प्रसारित वक्तव्य)

पाकिस्तान के आक्रमण के परिणामस्वरूप हमारे देश पर थोपा हुआ युद्ध गंभीर संघर्ष का रूप धारण करता जा रहा है। हम सबको परिस्थिति की चुनौती को स्वीकार करना होगा तथा दृढ़ता और धैर्यपूर्वक पूर्ण सफलता प्राप्त करनी होगी। युद्धग्रस्त क्षेत्र के विस्तार के साथ हमारे सामने नई–नई समस्याएं आएंगी और नई जिम्मेदारियों को हमें वहन करना होगा। शासन तो उन्हें निभाने का प्रयत्न करेगा ही, किंतु उसपर काफी भार होगा। अतः देश के सभी नागरिकों का कर्तव्य है कि वे देशहित की सामान्य नीतियों को ध्यान में रखते हुए इन दायित्वों के निर्वाह में हाथ बटाएं।

अतः मैं सभी देशवासियों तथा विशेषतः राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक बंधुओं का आह्वान करता हूं कि जो–जो समस्याएं पैदा हों, वे उनको दूर करने में सरकार का पूरा सहयोग करें। विस्थापितों की तथा घायलों और बीमारों की सहायता, शांति और व्यवस्था, नागरिक सुरक्षा, जिसका काफी काम गैरसरकारी आधार पर किया जा सकता है, करें। जनता के मनोबल को बनाए रखने, प्रखर राष्ट्राभिमान को जागृत करने तथा अंतिम विजय तक दृढ़तापूर्वक लड़ने का संकल्प पैदा करने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। हम सत्य के लिए तथा अपनी मातृभूमि की अखंडता और सम्मान के लिए लड़ रहे हैं। हमारी विजय सुनिश्चित है।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 185)

विस्थापितों की सहायतार्थ आह्वान

(18 नवंबर 1965, मुम्बई)

पाकिस्तान की ओर से हुए आक्रमण के कारण युद्ध की जो स्थिति उत्पन्न हुई है, उसका सामना करने के लिए शासन, सैनिक तथा समाज तीनों सिद्ध हुए हैं। प्रत्यक्ष युद्ध में लड़ने वाले सैनिकों तथा उनके कुटुंबियों को आवश्यक सहायता

पहुंचाने के लिए समाज ने जो तत्परता दिखाई है, वह अभिनंदनीय है। किन्तु इस युद्ध के कारण सीमावर्ती नागरिकों को बहुत ही कष्ट उठाने पड़े हैं। अनेक गांव ध्वस्त हुए तथा सैन्य–संचालन हेतु अनेक गांव खाली करने पड़े। इस कारण असंख्य नागरिकों को घर–बार छोड़कर जाना पड़ा। आज वे असहाय और निराश्रित हैं। युद्धविराम के पश्चात् कुछ तो अपने स्थानों को लौटकर जा सके, फिर भी जम्मू–विभाग के लगभग एक लाख लोग जम्मू के आसपास विस्थापितों के रूप में अभी भी पड़े हैं। इनमें से कुछ तंबुओं में रहते हैं, किन्तु बहुत बड़ी संख्या ऐसी है, जो पेड़ों के नीचे या खुले मैदान में हैं।

इनको सहायता पहुंचाने के शासन के प्रयत्न इतने कम प्रमाण में हुए हैं कि उच्च शासकीय स्तर पर सहृदयता से इस समस्या का विचार हो रहा है, ऐसा कहना कठिन है। अनेक संस्थाओं तथा पंजाब प्रांत के स्वयंसेवक बंधुओं ने प्राथमिक आवश्यकताओं की वस्तुएं उनके लिए जुटाने का प्रयत्न चलाया है। परन्तु आज ओढ़ने–पहनने के लिए ऊनी कपड़ों की अत्यंत आवश्यकता है। उस क्षेत्र में सर्दी बहुत पड़ती है और उससे यदि रक्षा न हुई तो अनेकों की सर्दी के कारण मृत्यु होने का भय है। खाद्यान्न की समस्या के कारण वे वैसे भी अधमरे हैं, दैनंदिन उपयोग के वस्त्रों की भी कमी है। कुछ की मृत्यु के समाचार अब तक आ भी चुके हैं। इस समय उनकी सब प्रकार से सहायता करने के लिए शीघ्र आगे आना हम सबका परम कर्तव्य है।

समाज के सभी बंधुओं से इस कारण यह प्रार्थना है कि अधिकतम संख्या में कोट, स्वेटर, कंबल, शाल, रजाइयां आदि देकर अपने इन विस्थापित बंधुओं के कष्ट को दूर करें। कपड़े अच्छे हों, बहुत पुराने अथवा जीर्ण–शीर्ण कपड़े देकर इन दुःखी बंधुओं का उपहास व अपमान नहीं करना चाहिए।

यह सहायता अत्यंत अल्पकाल में वहीं पहुंचाने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए शीघ्रातिशीघ्र अधिकाधिक सामान पहुंचाने की व्यवस्था हो, इस दृष्टि से सब बंधुओं का सहकार्य अपेक्षित है। यह सहकार्य दें, यह मेरा प्रार्थनापूर्वक आह्वान है।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 204–205)

■ ताशकंद वार्ता

(ताशकंद घोषणा के संबंध में 16 जनवरी 1966 को श्री गुरुजी की ऑर्गेनायजर के संवाददाता से नई दिल्ली में हुई बातचीत)

ऐसा नहीं कि ताशकंद घोषणा पूर्णतया गलत है, उसमें अनेकों अच्छी बातें भी हैं, परन्तु भारत के कारगिल, टीथवाल तथा हाजीपीर दर्रे से पीछे हटने की मांग ने इसे दूषित कर दिया है।

पाकिस्तान के साथ बचे विषयों का निपटारा एक साथ कर लेना चाहिए। सन् 1947 के बाद जितने मुसलमान भारत से पाकिस्तान गए हैं, उससे दुगुनी संख्या में हिन्दू वहां से आए हैं। पाकिस्तान को इनकी संपत्ति की क्षतिपूर्ति करनी

चाहिए। संयुक्त भारत के सार्वजनिक ऋण के अपने हिस्से से भी पाकिस्तान अभी उऋण नहीं हुआ है। यदि विधिसंगत देय को देने में वह असमर्थ है तो इसके बदले में उसे भूमि देनी चाहिए।

गत अगस्त, सितंबर में पाकिस्तान ने हम पर आक्रमण किया। हमें नित्य प्रति लगभग 25 करोड़ रुपए खर्च करने पड़े। पाकिस्तान को इस 'हरजाने' की भरपाई के लिए कहा जाना चाहिए।

निस्संदेह कश्मीर जो वैधानिक रूप से हमारा है, उसपर चर्चा करने का कोई प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मुझे खेद है कि ताशकंद में इन बातों में से किसी पर भी चर्चा नहीं हुई, पाकिस्तान कोई समस्या खड़ी करे, हम जाएं और चर्चा करें –ऐसा करने का कोई लाभ नहीं है। हमें पाकिस्तान को घात करने की छूट देना तथा तत्पश्चात केवल प्रतिघात करने मात्र से स्वयं को संतुष्ट नहीं कर लेना चाहिए।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 205)

■ 'अजेय, शक्तिशाली राष्ट्रपुरुष खड़ा करने की आवश्यकता'

(अक्तूबर 1965 की दिनांक 12 को जम्मू, 13 को अमृतसर, 14 को लुधियाना और 15 को अंबाला छावनी में दिए गए श्री गुरुजी के भाषणों का संकलित वृत्त यहां दिया जा रहा है।)

बाहर से हुए आक्रमणों से भारत के सम्मान और समग्र राष्ट्रजीवन की रक्षा के लिए सामना करना और उसमें विजय प्राप्त करना अपने भाग्य में लिखा हुआ है। दो हजार वर्षों से भी अधिक का समय ऐसा बीता है, जब इन्हीं क्षेत्रों से बड़ी–बड़ी विजय अपने लोगों ने प्राप्त की और भारत का सम्मान बढ़ाया।

वही बात फिर से हो रही है। पिछले दो–तीन मास में देश की सीमा पर जो संघर्ष हुआ है, उसका भी योग्य और सम्मानपूर्ण अंत होगा, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है। अभी तो युद्धविराम चल रहा है, युद्ध का अंत अभी नहीं हुआ है। यह तो मानों युद्ध के खेल में थोड़ी छुट्टी, बीच–बचाव की चेष्टा करने वाले लोगों ने दिलाई है। इसके अनेक पहलू हैं। एक पहलू यह भी है, कि अपने पर आक्रमण करनेवालों को सांस लेने तथा बातों–बातों में भारत के लोग सब कुछ भूल जाएंगे और फिर से भाईचारा करने के लिए तैयार हो जाएंगे। हमारी इस प्रवृत्ति का लाभ उठाकर वे फिर से हमला कर सकेंगे, ऐसी भावना शायद उनके मन में हो। इस दृष्टि से विचार करें तो कहना पड़ेगा कि युद्धविराम इस समय न होकर दस–पंद्रह दिनों के बाद होता और अपनी सेनाएं इसी प्रकार बे रोक–टोक आगे बढ़तीं, तो आज संसार में अपने बारे में जो कुछ चित्र दिखाई पड़ता है, वह सर्वथा बदल जाता।

वास्तविक रीति से सीमा लांघकर अपनी सेनाओं को आगे बढ़ाना तो अपनी रक्षा का एक मार्ग था। अपनी रक्षा अपनी सीमा के अंदर कोई कर नहीं सकता, क्योंकि अपनी सीमा के अंदर शत्रु घुसता चला जाए, अपने को मारता चला जाए और हम अपनी रक्षा करते बैठें, यह बात कभी संसार में हुई नहीं। प्रतिपक्षी पर आक्रमण करने में ही वास्तविक सुरक्षा है। जब मैं पढ़ता था, उन दिनों एक वाक्य पढ़ा था 'ऑफेन्स

इज द बेस्ट फॉर्म ऑफ डिफेन्स' यानि अपनी रक्षा के लिए आक्रमणकारी पर पहला हमला करो। हिन्दी में भी एक ऐसी कहावत है 'वह जीते, जो आगे मारे।' अपनी स्वतः की रक्षा की दृष्टि से सीमा को पार करना अपनी सेना के लिए आवश्यक हो गया था। राष्ट्र के सम्मान की रक्षा के लिए शत्रु की सीमा में जाकर हमने युद्ध किया, यह सर्वथा शास्त्रशुद्ध बात हुई है। इसमें यदि कोई कहे कि हम लोगों ने आक्रमणकारी वृत्ति का अवलंब किया है, तो यह सर्वथा गलत है। संयुक्त राष्ट्र संघ में बैठे हुये बड़े–बड़े देशों के बुद्धिमान लोगों ने इतनी बुद्धिहीनता की बात कैसी की, इसका मुझे आश्चर्य होता है।

पक्षपाती संयुक्त राष्ट्र संघ

जब से संयुक्त राष्ट्र संघ बना है मैंने कभी उसका विश्वास नहीं किया। अब भी विश्वास नहीं है। मुझे यही दिखाई देता है, कि बड़े–बड़े शक्तिशाली देश अपनी राजनीति चलाने और अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए उसे एक अखाड़ा मानते हैं। कश्मीर का ही मामला लें। राष्ट्रसंघ की न्याय प्रियता और शांतिप्रियता पर अपने हृदय में भोला विश्वास रखकर देश के नेताओं ने कश्मीर का प्रश्न उसके सामने रखा। परन्तु इन 18 वर्षों में किसने आक्रमण किया, इसके विषय में उसने एक शब्द भी नहीं कहा है। इन्हीं दिनों महामंत्री ऊथांट ने एक वक्तव्य में कहा था कि इस समय हमारे सामने कश्मीर के विषय में विचार करने के लिए समय नहीं है, अर्थात फिर से एक बार कश्मीर को राजनैतिक दांवपेच का अखाड़ा बनाने की उनकी इच्छा दिखाई देती है। कभी उन्होंने यह नहीं सोचा कि कश्मीर तो भारत का अंग ही है, उसके विषय में विचार करने का अन्य किसी को अधिकार नहीं है। इसका अर्थ यह है कि वे स्वयं अत्याचारी एवं पक्षपाती बन जाते हैं।

विकृत इतिहास

दुर्भाग्य से पिछले कई वर्षों से जो विकृत इतिहास पढ़ाया गया है, उसमें अपने पराक्रम और विजय का इतिहास नहीं है। बचपन में मैंने भी जो इतिहास पढ़ा, उसमें भारत के इतिहास के तीन खंड बताए जाते थे। पहले खंड का नाम 'पुरातन भारत' था। उस काल को 'गड़बड़ का अंधकारमय काल' कहकर 'द डार्क एज' नाम भी दिया गया। कोई बड़े लोग नहीं हुए, कोई धर्म नहीं था, संस्कृति–सभ्यता नहीं थी, सब जंगली व्यवहार था– ऐसा उस काल का वर्णन किया गया है। वास्तविकता तो यह है कि उन्हीं दिनों में चन्द्रगुप्त और अशोक जैसे महापुरुष उत्पन्न हुए, भगवान बुद्ध और भगवान महावीर जैसे महापुरुषों ने जन्म लिया। किन्तु ऐसा होते हुए भी उसको 'अंधकार का युग' कहकर हमारे मन पर विपरीत प्रभाव डालने का प्रयत्न परकीय राज्य सत्ता ने किया।

इसी प्रकार दूसरे कालखंड को उन्होंने 'मुगल काल' कहा। इस काल में सिंधु में हुए प्रथम आक्रमण से लेकर मुगल सल्तनत के अंतिम दिनों तक कुछ शताब्दियों का काल आता था। उसमें वर्णन किया गया कि मुस्लिम शासक बड़े विजयशाली रहे,

उन्होंने बड़े साम्राज्य खड़े किये, उनमें बड़े महापुरुष हुए और वे सभी प्रकार से अच्छे थे, जबकि उसी कालखंड में विजयनगर का साम्राज्य था, पर उसका वर्णन एक छोटे से अध्याय में किया गया। छत्रपति शिवाजी हुए, परन्तु उनका एक बागी के नाते थोड़ा सा वर्णन किया है। महाराजा छत्रसाल हुए, उनको तो एक क्षुद्र विद्रोही के अतिरिक्त और कोई स्थान नहीं दिया गया। इसी कालखंड में गुरु गोविंद सिंह हुए, उनको तो एक पंथ निर्माण करने वाले और बीच–बीच में कुछ बगावत करने वाले से अधिक स्थान इतिहास में नहीं दिया गया। हमें दिखाई देता है कि अपने पौरूष और पराक्रम के जितने भी प्रसंग थे, उन्हें छिपाकर और दबाकर केवल परकीय आक्रमणकारियों का गुणगान करने वाला विकृत इतिहास ही हमें सिखाया गया।

उसके बाद 'अंग्रेजों का काल' था और वहीं पर इतिहास समाप्त हो गया। उसको पढ़ने से दिखाई देता है कि 'हिन्दू' नाम का समाज जब से पैदा हुआ तब से मार ही खाता आया है। उसमें कोई अक्लमंदी नहीं, किसी प्रकार की शक्ति नहीं, पराक्रम नहीं, उसको राज्य चलाना आता नहीं, वही इतिहास हमें सिखाया गया, इसीलिए सबके मन पर यही भाव रहा कि हम तो सदैव पराजित होने वाले हैं। महात्मा जी ने भी कहा था कि 'प्रत्येक मुसलमान बहादुर है और प्रत्येक हिन्दू कायर।' एक बात अगर वे और कह देते तो अच्छा होता, जिसको लोग अंग्रेजी में 'बुली' कहते हैं, वह स्वयं कायर होता है, इसलिए उदंडता करता है। सत्यवीर पुरुष कभी उदंडता नहीं करता। पर शायद उन्होंने सोचा कि जनता इसे समझ लेगी, स्पष्ट शब्द बोलने की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं।

वीर पुरुषों की परम्परा

अभी जो लड़ाई हुई, उसने यह सारा चित्र बदल दिया है। अब लोगों की समझ में आ गया था कि बिल्कुल शांत और चुपचाप बैठा हुआ, बहुत ही नम्रता से व्यवहार करने वाला यह 'हिन्दू–समाज' जितना नम्र है, उतना ही कठोर भी है। जितना सब लोगों के साथ भाईचारा करने के लिए उत्सुक है, उतना ही कठोर प्रहार करने की ताकत भी अपने अंदर रखने वाला है। भले ही वह स्वयं किसी पर आक्रमण न करे। अपने यहां तो वीर पुरुषों का प्राचीनकाल से यह कहना है कि 'भाई तुम पहले मारो, तुम अपनी मारने की ख्वाहिश पूरी कर लो, क्योंकि अगर मैंने पहले मारा तो तुम बाद में मारने के लिए बचोगे नहीं।' ***हमारे यहां वीर पुरुषों की ऐसी परंपरा रही है कि हम किसी पर आघात करने के लिए अपने घर से दौड़कर नहीं जाते, परन्तु कोई आघात करने आता है, तो फिर उसको जिस प्रकार से दंड देना चाहिए, वह देने की क्षमता, शक्ति, पात्रता, प्रवृत्ति अपने अंदर है।***

राष्ट्र पुरुष का साक्षात्कार

इस युद्ध के समय एक बहुत बड़ी बात हुई है। शताब्दियों पूर्व विजयनगर साम्राज्य के समय अपने पूर्वजों ने पश्चिम समुद्र से पूर्व समुद्र तक साम्राज्य प्रस्थापित कर उत्तर से आई इस्लाम की लहर को रोक दिया था, परन्तु यह प्रयत्न हिन्दुस्थान के कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित था। छत्रपति शिवाजी के सामने यद्यपि समग्र हिन्दुस्थान था

और वे कहते थे कि अटक से दक्षिण में रामेश्वर तक हिन्दुस्थान हिन्दुओ का है। फिर भी इतिहासकार उनके बारे में कहते हैं कि वह तो मराठों का राज्य था। पंजाब में महाराजा रणजीत सिंह हुए हैं। कुछ लोग भ्रम से कहते हैं कि वह तो सिखों का राज्य था। समग्र भारत कश्मीर से कन्याकुमारी तक एक दूसरे के साथ कंधे से कंधा लगाकर खड़ा हो, ऐसी स्थिति शायद पिछले हजार–बारह सौ वर्षो में कभी देखने को नहीं मिली। यह सौभाग्य इस बार अपने को प्राप्त हुआ है।

यह बात हम पिछले चालीस वर्षो से कहते आ रहे हैं कि आसेतु–हिमाचल समग्र समाज अपना एक विराट पुरुष की भांति खड़ा है। इसकी सैकड़ों भुजाएं, सैकड़ों सिर, सैकड़ों आंखे, सैकड़ों पैर हैं। पर इसकी आत्मा एक है, हृदय एक है, इस प्रकार का यह विराट पुरुष अजेय शक्तिसंपन्न बनकर खड़ा रहे। मानों ईश्वर की कृपा से यह सौभाग्यपूर्ण अवसर अपने को देखने के लिए मिला है। इसका हम सब लोगों को गर्व होना चाहिए। इस दृष्टि से यह युद्ध हमारे लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है। इसके कारण अपने हृदय की सुप्त एकात्मता की, राष्ट्रभक्ति की भावना जाग पड़ी। फिर उत्तर से दक्षिण तक सब लोग खड़े होकर 'यह अपना राष्ट्र है' अतः इसकी रक्षा के लिए हम लोग कटिबद्ध होकर लड़ेंगे, इस भावना से संपूर्ण भारत से लोग सेना में भर्ती होने के लिए आए। सब कहने लगे कि 'शत्रु को खदेड़ देंगे, उसका गर्व तोड़ देंगे।' सर्वसामान्य जनता ने भी सहयोग किया। घर की रोटियां भी फौजियों को खिलाई। ट्रक द्वारा सामान पहुंचाने वाले कितने ही ट्रकचालकों ने प्राण खतरे में डालकर बिलकुल मोर्चे तक जाकर सब प्रकार की सामग्री पहुंचाई।

लोकसभा में कहा गया है, कि हमारा पाकिस्तान के साथ अर्थात् पाकिस्तान की जनता के साथ कोई झगड़ा नहीं है। हमें केवल उसकी युद्ध करने की शक्ति जो दूसरे देशों, खासकर अमरीका से मंगाए हुए शस्त्रास्त्रों के कारण है, जिसके बलबूते पर वह घुड़कियां देता है, नष्ट करना है। अपनी सेना ने बहुत बहादुरी से बड़ी कुर्बानी देकर, उसका बहुत अधिक 'वार पोटेन्शियल' नष्ट किया भी है। अमरीका के लोग तो आश्चर्य से देखते रह गये कि अजेय, अभेद्य समझे जाने वाले उनके 'पैटन टैंक्स' दियासलाई की डिब्बी के समान कैसे टूट गए? हमने तो यंत्र के विरुद्ध आदमी लड़ाया। यंत्र तो आदमी द्वारा बनाया जाता है। आदमी के सामने यंत्र टिक नहीं सकता।

पाकिस्तान का वार पोटेन्शियल

क्या असली 'वार पोटेन्शियल' शस्त्रास्त्रों से आता है? मनुष्य के पास विपुल मात्र में शस्त्र रहे, लेकिन लड़ने की इच्छा ही नहीं रही, तो लड़ाई हो नहीं सकती। इसलिए 'वार पोटेन्शियल' शस्त्रों पर निर्भर नहीं मनुष्य की 'मनोवृत्ति' पर निर्भर रहता है। मनुष्य में यदि 'वार मेंटेलिटी' रही तो वह आज नहीं, कल लड़े बगैर नहीं रहेगा। हम विचार करें कि पाकिस्तान का असली 'वार पोटेन्शियल' क्या है?

'वार पोटेन्शियल' मनुष्य की विशिष्ट प्रकार की मनोरचना में रहता है। पाकिस्तान के अलग राज्य के रूप में खंड़ा होने के कारण ही लड़ाई–झगड़े के प्रसंग उपस्थित

होने लगे। लड़ाई न हो ऐसी अगर किसी के मन में इच्छा हो तो उसको यही कहना पड़ेगा कि पाकिस्तान खत्म होना चाहिए।

पाकिस्तान के खत्म होने से इस्लाम खतरे में पड़ जायेगा, यह सोचना भी गलत है। इतिहास गवाह है, कि हिन्दुओं से इस्लाम को कभी खतरा नहीं पहुंचा। बल्कि भारत में तो मुसलमानों की हद से ज्यादा खातिरदारी हुई है। भारत में बडे–बड़े साम्राज्य स्थापित हुए, उनमें भी मुसलमानों को कभी कष्ट नहीं पहुंचा। शिवाजी की सेना में मुसलमान सेनापति रहा करता था। पानीपत की तीसरी लड़ाई में अहमदशाह अब्दाली के विरुद्ध जो सेना लड़ी थी, उसमें इब्राहिम और समशर नाम के सेनापति थे। आज भी हमारे यहां हिन्दू, मुसलमान व ईसाई में कोई भेदभाव नहीं किया जाता। ऐसा भी नहीं कि वे लोग इस देश को कम प्यार करते हैं। हाल की लड़ाई में ईसाई और मुसलमान भी वैसे ही लड़े, जैसे और लोग। यह भारतीय जीवन की श्रेष्ठता है। यहां आकर पाकिस्तान के मुसलमान संतोष और शांति से रह सकते हैं। परन्तु देश के अंदर रहकर या इसके बाहर से इसकी शत्रुता करेंगे तो उनके खिलाफ हम बोलेंगे, उनकी शत्रुता का समर्थन नहीं किया जा सकता। वे शत्रुता करें और हम भाई कहें, इस प्रकार की विचित्र बात करने के लिए हम तैयार नहीं। मजहब से हमारी कोई आपत्ति नहीं। हम तो उनसे इतना ही चाहते हैं कि वे ईमानदार रहें। हम न किसी की उपासना की पद्धति को बदलना चाहते हैं और न ही एक समाज के नाते उनका अस्तित्व नष्ट करना। लेकिन हमारे देश को काटकर अपने से शत्रुता करने के लिए बने हुए अलग राज्य की समाप्ति हम जरूर चाहते हैं।

एकात्मता के पोषण की आवश्यकता

यह केवल कहने से होना वाला नहीं। उसके लिए समग्र हिन्दू समाज संगठित और अनुशासनबद्ध, सदैव जागृत, परस्पर की सहायता के लिए सिद्ध चाहिए। इस समाज का जो एकात्म भाव इस लड़ाई में देखने को मिला, वह उसकी सहज स्थिति है और वह अविचल बनाकर रखनी चाहिए। इस एकात्मता को भाषा, प्रांत, जाति या अन्यान्य स्वार्थो के कारण किसी की नजर न लगे, इसकी चिंता हमें करनी चाहिए, क्योंकि समाज में आज भी विभेदकारी प्रवृत्तियां प्रचुर मात्रा में दिखाई देती हैं। समाज के सब अंगों में आत्मीयता और प्रेम का संबंध दिखाई नहीं देता। इसके साथ ही गांव–गांव में कितना दारिद्रय दिखाई देता है। वहां लोगों को दो बार भोजन भी नहीं मिलता। उन्हें लज्जारक्षण के लिए वस्त्र नहीं, रहने के लिए स्थान नहीं है। वे सड़क के किनारे जैसे–तैसे सर्दी में अपने शरीर को समेटकर पड़े रहते हैं। अनेक लोग भूख से मर रहे हैं। मेरा प्रश्न है कि यह सब देखने के बाद बाकी के अपने बंधुओं से अन्न कैसे खाया जाता है। शरीर–धारणा और समाज की सेवा के लिए आवश्यकता के अनुसार कुछ खाना अलग बात है और बड़े चाव से खाना अलग बात है।

आपसी झगड़े करने के लिए भी लोग खड़े होते हैं। अपने देश में सभी प्रांतों के सभी भाषा–भाषी लोगों को एक–दूसरे के साथ जोड़ने के लिए हमें एक व्यवहार–भाषा अपनानी चाहिए। विदेशी भाषा ही अपने को जोड़ने के लिए रहे, यह अपने लिए

लज्जा की बात है। समझदार लोगों ने कहा कि हिन्दी भाषा अधिकतर समझी जाती है, दक्षिण में भी थोड़ी मात्र में समझी जाती है। अतः इसी भाषा को हम सब मिलकर अपनी व्यवहार–भाषा के रूप में समृद्ध करें।

संघ कार्य के संबंध में विशेष न बताते हुए भी सब बातें अपने आप ध्यान में आ सकेंगी, क्योंकि संघ का प्रारंभ से आह्वान है कि राष्ट्रजीवन का सुगठित सामर्थ्य अपने को उत्पन्न करना है। भारतमाता की प्रबल भक्ति अपने अंदर जागृत करनी है, समग्र हिन्दू–समाज के प्रति बंधुत्व की भावना भरनी है, अनुशासनबद्ध सामर्थ्य के रूप में हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक एक भव्य, विराट, अजेय, शक्तिशाली राष्ट्रपुरुष खड़ा करना है और संघ यह कार्य निरंतर कर रहा है।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 190-202)

पत्रकार वार्ता

■ कश्मीर पर चिंतन

प्रश्न : कश्मीर की समस्या पर आपका क्या मत है?

उत्तर : यह एक राजनैतिक समस्या है, जिसे सरकार को ही सुलझाना चाहिए। हम अपना मत व्यक्त कर सरकारी योजनाओं के मार्ग में बाधा निर्माण करना नहीं चाहते।

प्रश्न : कश्मीर के संबंध में सरकार किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई है। वह कश्मीर खोना नहीं चाहती और उसे सुरक्षित रखने का मार्ग उसे दिखाई नहीं देता?

उत्तर : कश्मीर को सुरक्षित रखने का एकमात्र तरीका उसका भारतीय संघ में पूर्ण विलय है। अनुच्छेद 370 के साथ–साथ पृथक ध्वज एवं पृथक संविधान को समाप्त करना आवश्यक है। यदि राष्ट्रपति शासन लागू करना अनिवार्य हो तो उसका सहारा अवश्य लेना चाहिए। कुछ व्यक्तियों का कथन है कि राष्ट्रपति शासन अस्थायी तौर पर ही लागू होगा और एक–दो वर्ष में नवीन निर्वाचन आवश्यक होंगे। तब निर्वाचनोपरांत गठित होने वाली विधानसभा वर्तमान विधानसभा से भी अधिक सांप्रदायिक हो सकती है। उस स्थिति में क्या होगा? इन संभावनाओं से पूर्णतया इनकार नहीं किया जा सकता। परन्तु आधारभूत प्रश्न यह है कि हम कश्मीर की सुरक्षा चाहते हैं अथवा नहीं? यदि कश्मीर की सुरक्षा आवश्यक है तो उसके लिए प्रत्येक संभव उपाय करना होगा। यदि सीमांतवर्ती 'नेफा' प्रदेश का प्रशासन सामरिक महत्व को ध्यान में रखकर सेना के माध्यम से केन्द्र सरकार के अंतर्गत रह सकता है, तब सामरिक कारणों से कश्मीर के सीमांतवर्ती प्रदेश का प्रशासन उसी रीति से क्यों नहीं चलाया जा सकता।

प्रश्न : ऐसी नीति के संबंध में संसार की प्रतिक्रिया क्या होगी?

उत्तर : अपने राष्ट्र की दृष्टि से अत्यावश्यक राष्ट्रीय हित कौन से हैं, इसका निर्णय हमें करना होगा और तभी उनका संरक्षण किया जा सकेगा। 'विश्व–जनमत' की अधिक चिंता करने का कोई कारण नहीं है। क्या विश्व–जनमत आज भी भारत के अनुकूल है? क्या इस विश्व–जनमत ने जूनागढ़, हैदराबाद और गोवा की समस्याओं पर हमारा समर्थन किया था? भारत का प्रशासन भारतीय हितों को दृष्टिगत रखकर करना होगा। उसमें अन्य विदेशी राष्ट्रों की प्रतिक्रिया निर्णायक कारण नहीं बन

सकती, क्योंकि उक्त प्रतिक्रिया उनके अपने स्वार्थों से प्रेरित होगी।

(श्री गुरुजी समग्र 9, पृष्ठ 60-61)

■ भारत-पाक संबंध

न्ययार्क टाइम्स के मैगजीन सैक्शन में इस समाचार पत्र के संवाददाता श्री लूकस राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तथा जनसंघ के संबंध में लेख प्रकाशित करना चाहते थे। इस संदर्भ में उन्होंने श्री गुरुजी से 13 मई 1966 को हैदराबाद में वार्तालाप की। यहां पर बातचीत का वह अंश उद्धृत किया जा रहा है जो भारत–पाकिस्तान के संदर्भ में है :–

श्री लूकस : मैं यह अच्छी तरह समझता हूं कि आपकी संस्था राजनैतिक नहीं है। तो भी मैं भारत–पाक समस्या और ताशकंद समझौते के बारे में आपके दृष्टिकोण को जानना चाहता हूं।

श्री गुरुजी : मैं अनेक अवसरों पर इन मामलों पर अपने विचार पहले ही व्यक्त कर चुका हूं। मेरे विचार से ताशकंद समझौता, समझौता है ही नहीं। यह बिल्कुल अर्थहीन है। संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र में पहले से जो कुछ कहा गया है, यह उस का पुनर्कथन मात्र है। घोषणापत्र में कहा गया है कि सदस्य राज्य अपने पारस्परिक विवादों को तय करने के लिए बल का प्रयोग नहीं करेंगे। भारत और पाकिस्तान दोनों ही राष्ट्र–संघ के सदस्य हैं। जब पाकिस्तान राष्ट्र संघ के इस घोषणा पत्र का उल्लंघन करके हम पर आक्रमण करता है, तब हम यह कैसे कह सकते हैं कि वह इस समझौते का उल्लंघन नहीं करेगा। हमारे इस पड़ोसी की युद्धपिपासा अभी वैसी ही है और किसी भी समय संघर्ष छिड़ सकता है। समाचार है कि हमारे चारों ओर सशस्त्र सेना का भारी जमाव है और युद्ध भड़क सकता है, ताशकंद समझौता रहे या जाए।

श्री लूकस : इस लाइलाज समस्या 'पाकिस्तान' के लिए आपका हल क्या है?

श्री गुरुजी : हाँ, यह एक लाइलाज समस्या ही है। मेरी समझ में कोई और उपाय तो है नहीं। इसके अलावा कि दो अलग–अलग देश के स्थान पर दोनों को मिलाकर एक देश बन जाए। कुछ लोग कहते हैं कि झगड़े की जड़ कश्मीर है और यदि कश्मीर पाकिस्तान को दे दें तो यह समस्या सदैव के लिए हल हो जाएगी। किन्तु मेरा विचार तो यह है कि जो ऐसा कहते हैं, वे भी हृदय से ऐसा नहीं मानते। वे भोलेपन के कारण तो ऐसा कहते नहीं। इसके पीछे उनका कुछ अन्य उद्देश्य रहता है। एकमात्र हल यही है कि एक ही राज्य हो। हमें इसी के लिए कार्य करना चाहिए।

(श्री गुरुजीसमग्र 9, पृष्ठ 155-156)

प्रश्न : क्या आप पाकिस्तान के हिन्दुओं में भी अपना कार्य करेंगे?

उत्तर : यदि संभव हो तो अवश्य करेंगे।

प्रश्न : भारतवर्ष की भौगोलिक सीमाओं के बारे में आपकी क्या धारणा है?

उत्तर : देश में इस मत का अत्यधिक जोर है कि भारत की पुरानी सीमाओं को पुनरपि प्राप्त कर लिया जाए। मेरा दृष्टिकोण इससे भिन्न नहीं है। जहाँ तक संभव हो, हमें इन दो विभाजित प्रदेशों को फिर से एक करने की दिशा में प्रयत्नशील रहना चाहिए।

प्रश्न : देश के विभाजन के बारे में किए हुए आपके इस कथन का अन्यथा अर्थ भी लिया जा सकता है। क्या आप उसे और अधिक स्पष्ट करेंगे? क्या आप विभाजन को मिटाना चाहते हैं अथवा अपने सांस्कृतिक संबंधों का विस्तार करना?

उत्तर : वास्तव में तो यह एक राजनैतिक प्रश्न है, किन्तु मुझे यह कहना ही होगा कि विभाजन से कोई भी व्यक्ति प्रसन्न नहीं है।

प्रश्न : भारत के प्रति पाकिस्तान शत्रुता क्यों रखता है?

उत्तर : पाकिस्तान के अस्तित्व का आधार ही भारत के प्रति घृणा है। इसलिए पाकिस्तान को 'घृणा' जरूरी हो गई है, अन्यथा वह समाप्त हो जाएगा।

प्रश्न : कुछ समय पूर्व आपने कहा था कि पाकिस्तान को सुधारा नहीं जा सकता। उसे तो समाप्त ही करना होगा। क्या अब भी आपकी यही राय है?

उत्तर : जी हाँ। आज भी मेरा यही मत है। यह बात मैंने किसी भावुकता के क्षण में नहीं कही। मेरा मत है कि एक बार पुनः देश अखंड होगा। विभाजन नितांत तर्कहीन है। वह समाप्त ही होना चाहिए। इससे मुसलमानों की समस्या भी हल होगी। विभाजन से यह समस्या हल नहीं हुई, अपितु वह अधिक उग्र हुई है।

प्रश्न : श्री पीलू मोदी ने सुझाव दिया है कि भारत और पाकिस्तान के बीच सीमाएं खुली होनी चाहिए?

उत्तर : यह तो ठीक है। परन्तु जब तक यह सब चल रहा है, तब तक सीमाएं खोलने से क्या होगा? जो हमसे युद्ध करने पर तुले हुए हैं, वे इसका लाभ उठाएंगे, अपने लिए अनुकूलताएं उत्पन्न करेंगे। इसलिए यह सुझाव बहुत व्यावहारिक और बुद्धिमत्तापूर्ण प्रतीत नहीं होता। आज भी उनके एजेन्ट हमारे देश में घुसे आ रहे हैं और यहां–वहां विक्षोभ तथा उपद्रव पैदा कर रहे हैं। ऐसा बताया जाता है कि जासूसी का बहुत बड़ा जाल भी वे फैला चुके हैं।

प्रश्न : शेख अब्दुल्ला की इस घोषणा में क्या आपको कोई नई चाल दिखाई पड़ती है कि उन्हें कश्मीर-विषयक संवैधानिक व्यवस्था में कोई आपत्ति नहीं है?

उत्तर : ऐसी बात अनेक वर्ष पूर्व भी वे कह चुके हैं और उससे मुकर भी चुके हैं। जब तक समय की कसौटी पर उनकी घोषणा सही नहीं उतरती तब तक उनके आज ऐसा कहने पर विश्वास करने से क्या लाभ? एक स्थान पर एक, तो दूसरे स्थान पर दूसरी बात कहने और पिछली बात से मुकर जाने का उन्हें अभ्यास है।

प्रश्न : आपके विचार से भारत-पाक संघर्ष का अंतिम हल क्या हो सकता है?

उत्तर : ऐतिहासिक दृष्टि से यह एक ही देश था। ईश्वर प्राप्ति के लिए विशिष्ट उपासना पद्धति अपनाने से राष्ट्रीयता नहीं बदलनी चाहिए। यदि इस सिद्धांत को स्वीकार कर लिया जाए तो ऐसा मानना चाहिए कि सीमा के उस पार रहने वाले लोग अपने देश में ही रह रहे हैं। इसलिए अपने जैसा व्यवहार ही उनसे किया जाना चाहिए। देश के दूसरे महान नेताओं के साथ हम भी कहते आए हैं, कि पाकिस्तान देश का निर्माण घृणा के आधार पर हुआ है। इसका अस्तित्व समाप्त होना चाहिए। पहले हम एक थे। कुछ दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं के कारण हम दो देश बनें। हमें एक

हो जाना चाहिए, समस्या हल हो जाएगी।

प्रश्न : क्या यह हल व्यवहारिक है?

उत्तर : प्रारंभ में अव्यवहारिक दिखने वाली बातें व्यवहारिक ही नहीं, वास्तविक भी हो जाती हैं।

प्रश्न : भारत और पाकिस्तान एक देश बनने पर सांप्रदायिक सद्भाव की गारंटी क्या होगी?

उत्तर : पाकिस्तान के बहुसंख्यक जिस मजहब का पालन करते हैं, उस मजहब का पालन करनेवालों की संख्या हमारे देश में भी काफी है। हम सांप्रदायिक सद्भाव के साथ ही रहते हैं। इधर–उधर कभी–कभी कुछ छुट–पुट घटनाएं हो जाती हैं। किन्तु ये सदा के लिए होती रहेंगी, ऐसा नहीं लगता।

(श्री गुरुजी समग्र 9, पृष्ठ 40-46)

■ पाक-अधिकृत कश्मीर एवं बंगला शरणार्थी

(16 दिसम्बर, 1971, बंगलौर में पत्रकारों से अनौपचारिक चर्चा)

प्रश्नः पाक-अधिकृत कश्मीर को मुक्त करने के लिए क्या हमें इस अवसर का लाभ नहीं उठाना चाहिए?

उत्तर : हाँ। ऐसा किया जाना चाहिए।

प्रश्न : क्या आपको यह आशंका है कि विस्थापितों की वापसी और पुनर्वसन के विषय में कोई गंभीर समस्या खड़ी होगी?

उत्तरः पिछले कुछ महीनों में हुआ यह है कि पूर्व बंगाल के विस्थापित हिन्दुओं की संपत्ति पर कब्जा कर स्थानीय मुसलमानों में बांट दी गई है। इसलिए विस्थापित वापस न जाएं–इस बात में वहां के मुसलमानों का निहित स्वार्थ है। इनके वापस जाने पर उन्हें इस प्रकार कब्जा की गई जमीन–जायदाद पर से हटना और उसे सही मालिकों को वापस लौटाना एक पेचीदा मामला है, हो सकता है इस स्थिति में वे अपने निर्वाचित नेताओं के विरुद्ध हो जाएं। वहां की जनप्रिय सरकार को यह खतरा मोल लेना होगा। फिर भी स्थानीय सरकार के सहयोग से भारत सरकार यदि प्रभावी कदम उठाए, तो यह समस्या शीघ्र हल हो सकेगी।

प्रश्न : हो सकता है कुछ हिन्दू वापस न जाना चाहें, तो उन्हें छूट देनी चाहिए अथवा उनकी वापसी अनिवार्य होनी चाहिए?

उत्तर : कुछ स्मृतियां उन्हें वापस न जाने के लिए प्रेरित कर सकती हैं। कुछ अप्रिय घटनाएं हुई हैं। फिर भी बंगाली स्वभाव से उदार हुआ करता है। अतः हो सकता है कि वह सब बातें भुला दें और उन्हें क्षमा कर दें। अंततः भूमि का लगाव बड़ा प्रबल होता है, इसलिए वे वापस जा सकते हैं।

(श्री गुरुजी समग्र, खण्ड 10, पृष्ठ 219)

स्वयंसेवकों से पत्र व्यवहार

✿ श्री बाबू राम चौहान की कश्मीर विषय पर लिखी पुस्तक से श्री गुरुजी द्वारा लिखे गए पत्र का अविकल रूप :-

–29 मार्च, 1965

श्री बाबूराम जी चौहान, चंडीगढ़

आपका 12-3-1965 का पत्र व कश्मीर संबंधी पुस्तक कल प्राप्त हुई। पुस्तक पूर्ण पढ़ी। संविधान तथा अंतर्देशीय विधि की दृष्टि से आपने समस्या का स्वरूप स्पष्ट कर उसे सुलझाने के वैधानिक मार्ग भी दिग्दर्शित किए हैं। उससे सिद्ध हो जाता है कि कश्मीर को अलग मानकर चलने की नीति अपने मन की विकृतियों में से भूत का निर्माण कर उससे डरने के समान मिथ्यात्व पर चल रही है। परन्तु कश्मीर के प्रश्न पर लोगों ने राजनैतिक, धर्मपंथाभिमान से पुष्ट अनेक असंबंधित प्रश्न जोड़ने का प्रयास चलाया है। अपने बड़े–बड़े नेतागण भी इस हानिकारक चाल में हैं।

जागतिक राष्ट्र संघ (यू.एन.ओ.) के नाम पर अमरीका, इंग्लैड आदि अपने–अपने राजनैतिक स्वार्थ के निकष पर इस समस्या का हल ढूंढने की चेष्टा कर रहे हैं। न्याय, सत्य आदि का किसी को कुछ भी महत्त्व नहीं। केवल तात्कालिक हित ही उनके विचारों का प्रेरक दिखता है। इस वायुमंडल में अपनी राष्ट्रशक्ति के आत्मविश्वास से अपने न्याय पदक्षेप के कारण निःशंक अंतःकरण से दृढ़ता की नीति अपनाना तथा अपने अनेक जागतिक ख्याति के विद्वानों के समकक्ष खड़े होकर जो सुझाया है, उस अलगाव को सिद्धांततः वैधानिक रीति से तथा व्यवहारतः सदा के लिए समाप्त कर देने के अतिरिक्त अन्य योग्य हितकारक मार्ग नहीं है।

अलगाव की यह विचित्र अप्राकृतिक अवस्था जितने दिन बनी रहेगी, नए–नए संकटों को निमंत्रित कर समस्या की जटिलता बढ़ती रहेगी और जैसे अधिक विलम्ब होने से रोग असाध्य बनकर प्राणहरण कर लेता है, वैसे विषैली स्थिति इस समस्या की बन जाएगी।

अभी देश–विदेश में जिस प्रकार भारत के प्रतिकूल प्रचार चलने दिया जा रहा है, उससे यही लगता है, यह विष बहुत ऊपर तक चढ़ चुका है और उसका परिणाम वही होगा जो 1946-47 के पूर्व मुस्लिम लीग के प्रचार को बढ़ने देने का, उससे समझौता करने का तथाकथित उदार नीति का हुआ है। आपने वैधानिक दृष्टि से अपने नेताओं के हाथों में न्यायबल भरने का प्रयास किया है।

हम सब मिलकर श्री भगवान से प्रार्थना करें कि इसका उचित उपयोग कर अपने देश पर जो कालिख लगी हुई है, उसे धो डालने की कर्तव्य दक्षता एवं आत्म सम्मान राष्ट्राभिमान की प्रबल उर्मि से उनके देह, मन, बुद्धि को भर दें तथा वे अविलंब दिग्दर्शित पग उठाने में न झिझकते हुये आगे बढ़कर यश प्राप्त करें। आगे कभी हम लोग मिलेंगे तब और विचार हो सकेगा।

(श्री गुरुजी समग्र खण्ड–7 पृष्ठ 255-256)

धूल झाड़कर मंदिर स्वच्छ करें

श्री ओम प्रकाशजी मैंगी, संघचालक, जम्मू
5 अप्रैल, 1967

शाखाओं पर जो परिणाम हुआ है, वह समझ में आया। आंधी उठने पर चारों ओर धूल छा जाती है। घर, धर्मशाला, भगवान का मंदिर सभी उसकी लपेट में आ जाते हैं। भक्तों का काम है कि आंधी का प्रकोप कम होते ही धूल झाड़कर मंदिर स्वच्छ करें और अपनी नियमित पूजा चालू रखें। आप वहां के प्रमुख होने के नाते अपने सब कार्यकर्ताओं से स्नेह, आत्मीयता से विचार-विमर्श कर शाखाओं को सुचारू रूप से चलाने के लिए उन्हें प्रेरित करने का अधिकार आपका है। परिस्थिति से केवल दुखी होकर सबके प्रति दोषारोपण करने से कुछ होने वाला नहीं हैं, आपसे यह अपेक्षित भी नहीं है।

(श्री गुरुजी समग्र 8, पृष्ठ 346)

मान्यवर पं. प्रेमनाथ जी डोगरा के स्वास्थ्य के बारे में बहुत चिन्ता प्रकट करते हुए श्री गुरुजी ने उन्हें पत्र लिखा :-

15 जनवरी 1972

पूर्ण जांच कराने तथा अच्छा उपचार कराने, आपको दिल्ली जाने के लिये अपने कार्यकर्ताओं ने सुझाव दिया होगा। मैं समझता हूँ कि यह सुझाव बहुत उचित है। प्रवास का कष्ट भी विमान से जाने का निश्चय किया तो कम होगा। आपसे अनुरोध है कि आप अवश्य दिल्ली जाकर स्वास्थ्य लाभ करें।

मैंने सुना है कि आप जम्मू से कहीं जाने की इच्छा नहीं रखते, यह स्वाभाविक है। तो भी मेरी प्रार्थना है कि आप दिल्ली जाकर पूरी जांच करवाकर चिकित्सा की दिशा निश्चित करें। आशा है कि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करेंगे।

आपका स्वास्थ्य ठीक न होने के समाचार से मुझे जो चिंता हो रही है, उसके कारण ही यह आग्रह कर रहा हूँ।

(श्री गुरुजी समग्र दर्शन खण्ड 7, पृष्ठ 224)

माननीय संघचालकजी को, श्रद्धेय प्रेमनाथजी के शांत होने के उपरांत लिखते हैं: -

30 मार्च 1972

सब प्रकार के प्रयत्न विफल होकर आखिर पूज्य पं. प्रेमनाथजी अपने सबको छोड़कर चले गये। श्री (वरिष्ठ कार्यकर्ता) जम्मू गये थे और उधर से नागपुर आये। सब समाचार विदित हुआ। अपना बड़ा आधार गया। जनसाधारण पर प्रेम करने वाला उनकी कठिनाइयों में सहायता करने वाला श्रेष्ठ पुरुष अब नहीं रहा। यह रिक्तता कैसे दूर होगी, यह चिंता का विषय है।

आपने जम्मू, दिल्ली, बम्बई और फिर जम्मू में उनकी जो सेवा की है वह अतुलनीय है। घर के नाते से भी अधिक निकट का, अधिक प्रबल आत्मीयता का संबंध निर्माण हो सकता है, इसका यह प्रमाण है और संघकार्य की सफलता का आश्वासन है।

इहलोक छोड़ने के पूर्व उन्हें उनके चुनाव क्षेत्र में उनके ही प्रत्याशी शेख अब्दुल रहमान तथा अन्य क्षेत्र में उनके आशीर्वाद प्राप्त श्री चमनलाल को चुनाव में सफल देखने का सुअवसर उन्हें मिला, यह उनके भाग्य की बात है। उनके हृदय को बहुत शांति मिली होगी। अब आगे उनका स्थान ग्रहण कर सके ऐसा कौन है?

अब हम लोगों को उनका अनुकरण कर समाज के अंगप्रत्यंग में अत्यंत स्नेह का अटूट संबंध प्रस्थापित करने के लिए अपार परिश्रम करने की आवश्यकता है। परम कृपालु श्री परमात्मा के पास इस हेतु हम सब की शक्ति एवम् योग्य प्रेरणा प्राप्त होने के लिये मैं श्रद्धापूर्वक प्रार्थना करता हूँ और सबके आदरणीय दिवंगत जीव की सद्‌गति के लिये आशीर्वाद मांगता हूँ।

(श्री गुरुजी समग्र दर्शन 7, पृष्ठ 226-227)

संस्मरण

.... और श्री गुरुजी ने मुझे संघचालक घोषित किया

-ओम प्रकाश मैंगी

पूर्व संघचालक, जम्मू

■ अतीत का स्मरण करते हुए मुझे 1946 का वह कार्यक्रम याद आ रहा है जिसमें श्री गुरुजी बौद्धिक देने वाले थे और हम सभी कार्यकर्त्ता कार्यक्रम की पूर्व तैयारियों में जुट गये थे। जम्मू में बक्शीनगर क्षेत्र में कार्यक्रम के लिये पंडाल बनाया गया था और अवसर था शरदपूर्णिमा के आयोजन का। उस समय शहर में सांप्रदायिक तनाव था। धारा 144 लागू होने के कारण आम जन–जीवन प्रभावित था। इन प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद स्वयंसेवकों ने कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए रात भर कार्य किया। कार्यक्रम में स्वयंसेवकों की संख्या दो हजार से अधिक रही।

■ करनाल (पंजाब) में संघ शिक्षा वर्ग का आयोजन होने वाला था। इस बीच अधिकारियों की बैठक होने वाली थी और जम्मू से मुझे भी इस बैठक में जाना था। बैठक के दौरान मुझे बुखार चढ़ गया। कुछ दिन अस्पताल में मैं उपचाराधीन रहा। इस बीच एक दिन श्री गुरुजी मुझे देखने के लिए आ गये। उनके बायें बाजू पर मैंने काफी सूजन देखी। जब श्री गुरुजी यह भांप गये कि मैं उनकी उसी बाजू की ओर देख रहा हूं तो उन्होंने तत्काल उसी बायीं बाजू से मेरे शरीर को दबाते हुये पूछा, "कमजोरी है क्या।" मैं भीतर ही भीतर हतप्रभ रह गया कि इस बाजू में इतनी सूजन के बाद भी श्री गुरुजी अपने दर्द को महसूस नहीं होने दे रहे थे।

■ यह 1965 की बात है। पंडित प्रेम नाथ डोगरा जी उन दिनों प्रजा परिषद् के मुखिया थे और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संघचालक भी। उन्हीं दिनों श्री गुरुजी जम्मू पधारे थे। जब अधिकारियों तथा अन्य स्वयंसेवक बंधुओं की बैठक चल रही थी, तो इसी बीच उन्होंने मुझे जम्मू संभाग का संघचालक घोषित किया। (बातचीत के आधार पर)

श्री गुरुजी को विस्थापितों की भी चिंता थी

–भगवत स्वरूप

1. जिन दिनों जम्मू में दीवान बद्रीनाथ मंदिर में सायं शाखा प्रारंभ हुई थी, उन्हीं दिनों 16 अगस्त 1941 में श्री जगदीश अब्रोल स्यालकोट से नौकरी छोड़ने के पश्चात् प्रचारक के नाते यहां आये हुये थे। इसके बाद वेद मंदिर और रणवीर मंदिर में शाखाएं प्रारंभ हुई, उनमें प्रमुख स्वयंसेवक के नाते स्व. चमन स्वरूप, सरदार गुरुचरण सिंह और सूरज कपूर आते थे। जब मा. माधवराव जी जम्मू पधारे तो उन्होंने श्री अब्रोल से जम्मू–कश्मीर विभाग संघचालक का दायित्व किसी को सौंपने के लिए चर्चा की और यह तय हुआ कि जब श्री गुरुजी दिल्ली आयेंगे तो उनके साथ बैठकर तय किया जायेगा। जब अब्रोल जी ने विभाग संघचालक के लिए दिल्ली में श्री गुरुजी के समक्ष पं. प्रेम नाथ डोगरा जी का नाम प्रस्तावित किया तो श्री गुरुजी जी ने तुरंत स्वीकार कर लिया। यह 1942 की बात है। श्री गुरुजी 1942 के पश्चात् 1946-47 तथा 1965 तक जम्मू आते रहे।

2. जालंधर में डीएवी कालेज के पास बर्लटन पार्क में पंजाब प्रांत के स्वयंसेवकों का तीन दिवसीय शिविर सम्पन्न हुआ। यह नवम्बर/दिसम्बर 1956 की बात है। श्री गुरुजी इस शीत शिविर में उपस्थित रहे। जम्मू–कश्मीर से 200 स्वयंसेवकों ने इस शिविर में भाग लिया था। मैं भी इस शिविर में गया हुआ था।

जब शिविर में सायं शाखा में खो–खो का खेल बड़े जोश से चल रहा था, जम्मू से आये हुये स्वयंसेवक – श्री कृष्ण लाल गुप्ता बड़ी फुर्ती से खेल रहे थे और किसी की भी पकड़ में नहीं आ रहे थे। श्री गुरुजी भी खेल देख रहे थे तो उन्होंने अनायास ही कह दिया कि "कृष्ण बिजली जैसा दौड़ रहा है" तब से कृष्ण जी के नाम के साथ 'बिजली' जुड़ गया। आज भी उन्हें कृष्ण बिजली के नाम से पुकारा जाता है।

3. 1965 में भारत–पाकिस्तान युद्ध चल रहा था। छम्ब–ज्यौड़ियां तथा अन्य स्थानों से विस्थापित जम्मू आ रहे थे। मूठ्ठी गांव में भी एक शिविर में विस्थापितों ने शरण ले ली थी। नवम्बर 1965 में मैं प्रतिनिधि सभा की बैठक में नागपुर गया हुआ था। वहां पर नागपुर महाल संघ कार्यालय में श्री गुरुजी के समक्ष सभी प्रांत प्रचारक बैठे हुए थे। मुझे संदेश मिला कि श्री गुरुजी ने बुलाया है। जब मैं उनके पास पहुंचा तो उन्होंने कहा कि विस्थापितों की क्या दशा है? पता नहीं श्री गुरुजी को कहां से विस्थापितों की स्थिति में बारे में जानकारी मिली थी। मैंने सारी स्थिति का उनके सामने वर्णन कर दिया। तत्काल श्री गुरुजी ने सभी से कहा कि विस्थापितों को सर्दी से बचाने के लिए वहां गर्म कपड़े तथा कम्बल भेजे जायें। देखते ही देखते देशभर

के स्वयंसेवकों ने इतनी सहायता भेजी कि उस सामग्री को संभालना मुश्किल हो गया। हमने सभी स्वयंसेवकों के सहयोग से विस्थापितों में कम्बल–रजाई तथा गरम कपड़े बांटे।

....

जब सीट नम्बर बदलने से हम बाल-बाल बचे

–प्रो. चमन लाल गुप्ता

भाजपा के वरिष्ठ नेता एवं पूर्व केन्द्रीय राज्यमंत्री

■ अप्रैल 1967 : यह उन दिनों की बात है जब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के उत्तर क्षेत्रीय कार्यवाह मा. जितेन्द्र वीर जी जम्मू पधारे थे और उनका किश्तवाड़ जाने का कार्यक्रम तय था। मुझे उनके साथ जाना था। जब बुकिंग क्लर्क टिकटें देने लगा तो मैंने उनसे बस चालक के पीछे वाली दो सीटें देने का आग्रह किया। लेकिन उसने सीट नम्बर 1-2 के स्थान पर 13-14 सीट नम्बर ही दे दिया। सुबह पांच बजे हम जम्मू–किश्तवाड़ की बस में सीट नम्बर 13-14 पर ही बैठ गये। जब बस असर–बरार के बीच चल रही थी तो अचानक दुर्घटना हुई। चालक संतुलन खो बैठा और बस 232 फीट से भी अधिक गहरी खाई में गिर गई। चालक के पीछे वाली सीट नम्बर 1-2, जिस पर बैठने का मैंने बुकिंग कलर्क से आग्रह किया था, पर सवार दोनों यात्री इस दुर्घटना में मारे गये। हम बाल–बाल बच गये। कुछ दिनों बाद परम पू. श्री गुरुजी का मुझे पत्र प्राप्त हुआ। उन्होंने पत्र में इस दुर्घटना का उल्लेख करते हुए लिखा था कि परमात्मा ने आपसे और कई काम लेने हैं इस कारण से सीट नम्बर बदल गया।

■ अक्तूबर 1971 : श्री गुरुजी जम्मू आये हुए थे और उनके ठहरने की व्यवस्था पंडित प्रेम नाथ डोगरा जी के निवास पर की गई थी। मैं उन्हें निवास पर स्नानगृह तथा शौचालय दिखाने गया। रात का समय था। जब टार्च लेकर मैंने डोगरा जी के निवास की ऊपरी मंजिल में उन्हें शौचालय दिखाया तो वापसी पर वह मेरे साथ नीचे तक आ गये।

श्री गुरुजी के प्रस्थान के बाद हमें पता चला कि उस शौचालय में ततैयों ने छत्ता बना लिया था। हम सब हतप्रभ रह गये कि एक अनहोनी घटना होने से टल गई। यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है कि इस बीच श्री गुरुजी मेरे घर भी पधारे थे।

(बातचीत के आधार पर)

....

श्री गुरुजी के बौद्धिकों ने मुझे जगा दिया

-ओमकारनाथ काक

पूर्व प्रचारक, कश्मीर

1. परम पूजनीय श्री गुरुजी से फगवाड़ा के संघ शिक्षा वर्ग में मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। उन दिनों मैं स्नातक की परीक्षा देने के पश्चात् ''प्रथम वर्ष'' के

लिए फगवाड़ा के वर्ग में गया हुआ था। उस शिक्षा वर्ग में श्री गुरुजी को देखते ही उनके प्रति मेरा आकर्षण और बढ़ा। उनके बौद्धिकों ने तो मुझे जगा दिया। वे जब युद्ध का वर्णन किया करते थे तो ऐसा लगता था मानों युद्ध हमारे सामने हो रहा है। उनके तीन उद्‌बोधनों ने संघ के प्रति मेरी निष्ठा को और सुदृढ़ किया, जिसके फलस्वरूप मैंने संघ के लिए तन–मन–धन से सेवा करने का निश्चय लिया।

संघ में कार्य करने के बीज मेरे में 1946 से पहले ही अंकुरित हो गये थे। मुझे जब जानकारी मिली कि संघ में प्रचारक बनने का कोई प्रावधान है तो मैंने अपना नाम लिखवा दिया। मुझे नौकरी छोड़ने या फिर वैवाहिक जीवन से दूर रहने का कोई संकोच नहीं हुआ। श्री गुरुजी के व्यक्तित्व के गहरे प्रभाव के कारण मैंने ऐसा कदम उठाया। अब भी संघ ही मेरा संबल है।

2. भारत विभाजन के पश्चात् 1947 में विजयदशमी पर्व से पहले श्री गुरुजी श्रीनगर पधारे। विजयादशमी के इस कार्यक्रम में 500 से अधिक गणवेशधारी स्वयंसेवकों तथा अधिक संख्या में नागरिकों ने भी भाग लिया। यह कार्यक्रम डीएवी हाई स्कूल मगरमल बाग में संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम में भाग लेने के लिए निर्धारित समय के बाद जो भी आये उन्हें भीतर आने का प्रवेश नहीं मिला। इस कारण काफी प्रभावी लोगों को भी निराश ही वापस लौटना पड़ा। समय के प्रति इतनी प्रतिबद्धता को देखते हुए संघ का बड़ा ही प्रभाव बना। उस समय मैं अनंतनाग में जिला प्रचारक था। पैट्रोल का अभाव था, इसलिये बसें नहीं चल रही थीं। अनंतनाग जिले से कुछ स्वयंसेवक मेरे साथ एक सामान्य हाउसबोट में श्रीनगर तक आये। यह सफर अपने में अनोखा था।

3. डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के बलिदान के बाद पंजाब प्रांत का संघ शिक्षा वर्ग उस वर्ष कुरूक्षेत्र में आयोजित किया गया। मैं भी प्रांतीय बैठक के निमित्त वहां गया हुआ था। वहीं जानकारी मिली कि शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार किया गया है और बक्शी गुलाम मोहम्मद को प्रदेश का मुखिया बना दिया गया है। श्री गुरुजी के बौद्धिक का भी यही मुख्य विषय बना। उन्होंने कार्यकर्ताओं से कहा कि यदि संगठन का कार्य जम्मू–कश्मीर में शक्तिशाली न होता तो शेख की गिरफ्तारी नही हो सकती थी। उन्होंने कहा कि यदि संघ की शक्ति प्रभावी ढंग से बढ़ती है तो असम्भव कार्य को भी हम संभव बना सकते हैं। उनकी बातचीत से सभी कार्यकर्ताओं का आत्मविश्वास बढ़ा।

....

उनके समझाने की शैली अद्‌भुत थी

-पंडित अमरनाथ वैष्णवी

पूर्व संघचालक, कश्मीर विभाग

■ सबसे पहले श्री गुरुजी के दर्शन 1946 में लाहौर में हुए। वहां कृष्णानगर में नये कार्यालय का उद्‌घाटन उनके कर कमलों द्वारा होना था। इस

कार्यक्रम में भाग लेने के लिए श्रीनगर से मैं, मा. बलराज मधोक और श्री मखन लाल ऐमा गये हुए थे। वहां पर ही श्री गुरुजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ और हमारा उनसे परिचय भी हुआ। उनको हमारे नाम तत्काल स्मरण हो गये। श्री गुरुजी दिखने में पिता जी जैसे लगते थे और स्मरण शक्ति उन्हें मां से विरासत में मिली थी।

■ जम्मू में श्री गुरुजी को एक कार्यक्रम में आना था। इस बीच कश्मीर विभाग के स्वयंसेवकों की बैठक भी श्री गुरुजी के साथ हुई। इस बैठक में श्री शम्भू नाथ काचरू जो प्रतिष्ठित डीएवी स्कूल के अध्यापक थे, ने श्री गुरुजी से पूछा कि भारत सरकार कश्मीर पर करोड़ों रुपये खर्च कर रही है, फिर भी वे पाकिस्तान का ही राग अलापते हैं। इतना पैसा वहां खर्च करने का क्या औचित्य है? यही धन यदि हिमाचल पर खर्च किया जाता, तो वह प्रदेश कश्मीर से भी खूबसूरत बनता। ऐसे में कश्मीर के हिन्दू भी जो संख्या में नगण्य हैं हिमाचल में बस जाते।

स्वयंसेवक बंधु से ऐसा प्रश्न सुनकर श्री गुरुजी धीर–गम्भीर हो गये और उन्होंने कहा " If you leave Kashmir today you shall have to leave Delhi tomorrow, final decision is to be taken in Kashmir" (यदि आज आप कश्मीर छोड़ देंगे तो कल आपको दिल्ली भी छोड़नी पड़ेगी। अंतिम निर्णय कश्मीर में ही लेना होगा।)

■ जब श्री गुरुजी कश्मीर आये थे तो यहां उनके ठहरने की व्यवस्था बैरिस्टर नरेन्द्र जीत सिंह जी की कोठी में की गई थी जो गुपकार मार्ग (श्रीनगर) पर स्थित थी। वहां सुरक्षा विभाग का उत्तरदायित्व मुझे दिया गया था। करीब रात के डेढ़ बजे एक स्वयंसेवक को तीव्र बुखार चढ़ गया। हम सभी परेशान हो गये। न जाने श्री गुरुजी को इस बात की कहां भनक लग गई कि वह रात के दो बजे हमारे कमरे में पहुंच गये। उन्होंने तत्काल स्वयंसेवक के लिए दवाई का प्रबंध किया, तब जाकर श्री गुरुजी अपने कमरे में वापस लौटे।

■ गुरुदासपुर में कार्यकर्ताओं की बैठक होने वाली थी। बैठक प्रारंभ हुई। स्वयंसेवक अपना परिचय देने लगे। जब एक स्वयंसेवक ने अपना परिचय दिया तो श्री गुरुजी को स्मरण हो आया और उन्होंने उस कार्यकर्ता से पूछा कि "तुम्हारा दूसरा साथी आया है क्या?" तो उस कार्यकर्ता ने उत्तर दिया "नहीं"। जब उस स्वयंसेवक ने उस मित्र के न आने का कारण बताते हुये कहा कि, "वह अब फ्यूज बल्ब हो गया है" तो श्री गुरुजी यह उत्तर सुनकर हंस पड़े। श्री गुरुजी ने उनसे पूछा, "तुम कैसे यह जान गये कि वह फ्यूज बल्ब हो गया है। क्या होल्डर चैक किया है? कहीं वह ढीला तो नहीं, बल्ब फ्यूज नहीं है, होल्डर ढीला हो गया है, होल्डर को जांच लो।"

काम किस प्रकार करना है यह श्री गुरुजी अपनी शैली में समझाते थे। उनके समझाने का ढंग काफी अद्भुत था।

....

'हम सभी एक-दूसरे के दर्द की टीस का अनुभव करें'

–तिलक राज शर्मा (अधिवक्ता, जम्मू उच्च न्यायालय)

गोवा को मुक्त कराने के लिए देश में आंदोलन चल रहा था। जम्मू से भी गोवा मुक्ति आंदोलन में सहयोग देने के लिए कार्यकर्ताओं की एक टोली चल पड़ी थी, इनमें मैं भी शामिल था। बीच में जब हम नागपुर ठहरे तो वहां श्री गुरुजी से मिलने का सुअवसर प्राप्त हुआ। हमने अपने आने के प्रयोजन से उन्हें अवगत कराया। एक कार्यकर्त्ता ने उनसे पूछा कि हम गोवा जा रहे हैं जहां पहले से ही भारतीय सेना दुश्मनों के साथ लड़ रही है ऐसे में वहां जाने पर हमारी भूमिका क्या रहेगी?

इस पर श्री गुरुजी ने कार्यकर्ता को समझाते हुए कहा कि गोवा सुदूर दक्षिण में है आप उत्तर जम्मू–कश्मीर से आये हैं, इससे जो संवेदनशीलता उभर कर आती है वही देश के हर घटक के मन में हो, वहां जाना उसी दृढ़ीकरण की बात है। भारत के पतन का इतिहास यही कहता है कि अगर उत्तर में कुछ होता है तो दक्षिण वाले कहते हैं कि हमें क्या है? उस संवेदनशीलता को सृजित करने की यह एक क्रिया है जिसके द्वारा किसी भी प्रांत में हो रहे दर्द की टीस का अनुभव दूसरे प्रांत में रह रहा व्यक्ति भी अनुभव करे।

(बातचीत के आधार पर)

परिशिष्ट

- 1941– श्री गुरुजी का प्रथम बार जम्मू आगमन। स्वयंसेवकों एवं नागरिकों के भव्य कार्यक्रम को संबोधित किया।
- 10 नवम्बर 1946 – शरद पूर्णिमा के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में श्रीगुरुजी का जम्मू आगमन, बक्शीनगर में कार्यक्रम सम्पन्न।
- 1946 – श्री गुरुजी श्रीनगर भी पधारे। उन्होंने यहां एक हजार से अधिक गणवेशधारी स्वयंसेवकों को सम्बोधित किया।
- 17 अक्तूबर, 1947 – कश्मीर के भारत में विलय के विषय पर सरदार पटेल के आग्रह पर जम्मू–कश्मीर के महाराजा हरि सिंह से चर्चा करने विमान द्वारा श्रीनगर पहुंचे। उनके साथ बैरिस्टर नरेन्द्रजीत सिंह, प्रचारक माधवराव मुल्ये तथा दिल्ली के प्रांतप्रचारक श्री वसंतराव ओक भी थे।
- 18 अक्तूबर, 1947– श्री गुरुजी अपनी निजी कार से महाराजा हरि सिंह से मिलने उनके निवास 'कर्णमहल' पहुंचे, यहां महाराजा व महारानी ने उनका भव्य स्वागत किया।
- 19 अक्तूबर, 1947 – श्रीनगर में मगरमलबाग स्थित डीएवी स्कूल परिसर में विजयादशमी के अवसर पर पांच सौ स्वयंसेवकों का एकत्रीकरण। उसी दिन दिल्ली प्रस्थान से पूर्व श्री गुरुजी ने स्वयंसेवकों को सम्बोधित किया।
- 19 अक्तूबर, 1947 – कश्मीर विलय के बारे में तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू से विशेष चर्चा। तत्कालीन गृहमंत्री सरदार पटेल को महाराजा की अनुकूल मनःस्थिति से अवगत कराया।
- 18 मार्च 1960 – जम्मू परेड ग्राउंड पर सार्वजनिक कार्यक्रम में श्री गुरुजी का उद्‌बोधन।
- 6 सितम्बर, 1965 – पाकिस्तान युद्ध के प्रसंग पर प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री द्वारा बुलाई गई सर्वदलीय बैठक में सम्मिलित हुए।
- 12 अक्तूबर 1965 – जम्मू में जनसभा को सम्बोधित किया।
- 24 अक्तूबर 1971 –जम्मू आगमन पर जनसभा को सम्बोधन।

जम्मू परेड ग्राउंड पर सार्वजनिक कार्यक्रम में उद्‌बोधन करते हुए श्री गुरुजी।
व्यासपीठ पर पंडित प्रेमनाथ डोगरा और लाला हंसराज गुप्ता (18 मार्च 1960)
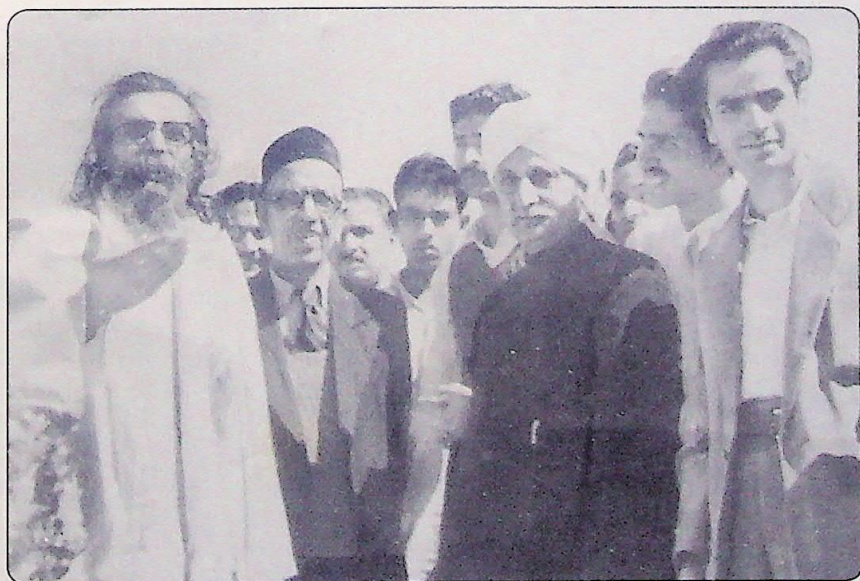
पंडित प्रेम नाथ डोगरा, श्री गुरुजी का स्वागत करते हुए (18 मार्च 1960 जम्मू)

★ संघ का प्रारंभ से आह्वान है कि राष्ट्रजीवन का सुगठित सामर्थ्य अपने को उत्पन्न करना है। भारतमाता की प्रबल भक्ति अपने अंदर जागृत करनी है, समग्र हिन्दू-समाज के प्रति बंधुत्व की भावना भरनी है, अनुशासनबद्ध सामर्थ्य के रूप में हिमाचल से लेकर कन्याकुमारी तक एक भव्य, विराट, अजेय, शक्तिशाली राष्ट्रपुरूष खड़ा करना है और संघ यह कार्य निरंतर कर रहा है।

– श्री गुरुजी

★ कश्मीर के प्रश्न पर भारत सरकार को दृढ़ता से काम लेना चाहिए। कश्मीर का भारत में विलय तो बहुत पहले ही हो गया है। वास्तव में तो अब इस प्रश्न को उठाने की आवश्यकता ही नहीं है। कश्मीर की समस्या का अंतिम रूप से समाधान हो गया है और भारत के साथ कश्मीर का विलय अंतिम एवं अपरिवर्तनीय है। कश्मीर को सुरक्षित रखने का एकमात्र तरीका उसका भारतीय संघ में पूर्ण विलय है। अनुच्छेद 370 के साथ-साथ पृथक ध्वज एवं पृथक संविधान को समाप्त करना आवश्यक है।

– श्री गुरुजी

★ जम्मू-कश्मीर के भारत विलय में पूज्य श्री गुरुजी का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

– माधवराव मुल्ये

★ मैंने श्री गुरुजी को कर्ण महल में प्रवेश करते देखा। यह अक्तूबर 1947 की बात है। उस दिन कश्मीर में महाराजा हरि सिंह और श्री गुरुजी के मध्य में क्या बातचीत हुई इसकी जानकारी नहीं मिल पायी, लेकिन इतना अवश्य है कि दोनों के मध्य काफी समय तक विचार विमर्श हुआ था।

– कैप्टन दिवान सिंह

महाराजा हरिसिंह के ए.डी.सी.